अंतस्

अर्धवार्षिक पत्रिका

वर्ष 2012; अंक-2

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर

श्रद्धांजलि

श्री संजीव एस कशालकर

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणी नैनं दहति पावकः। न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः।

जीवन काल - **13 जून 1955 - 8 मार्च 2012**

संस्थान में कुलसचिव के रूप में कार्यकाल - **11 नवम्बर 2005 - 8 मार्च 2012**

अंतस्-परिवार

संरक्षक
प्रोफेसर संजय गो. धांडे
निदेशक

परामर्शदाता
प्रोफेसर सुरेश चन्द्र श्रीवास्तव
उपनिदेशक

संपादक
प्रोफेसर अरुण कुमार शर्मा

सह-संपादक
डॉ वेदप्रकाश सिंह

संपादन-सहयोग
प्रोफेसर समीर खांडेकर
प्रोफेसर सर्वेश चन्द्रा
प्रोफेसर नरेन्द्र कुमार शर्मा
प्रोफेसर हरीशचन्द्र वर्मा
डॉ. ओमप्रकाश मिश्र

अभिकल्प
श्रीमती सुनीता सिंह

संकलन एवं वर्तनीशोधन
सर्वश्री जगदीश प्रसाद, भारत देशमुख, सोमनाथ डनायक
हिंदी साहित्य-सभा, श्री रविकान्त पांडे (शोध-छात्र)

छाया-चित्र
श्री रवि शुक्ल

संस्थान परिसर का विहंगम दृश्य

निदेशक की कलम से...

संस्थान की साहित्यिक पत्रिका **अंतस्** के दूसरे अंक को आपके समक्ष प्रस्तुत करते हुए सुखद अनुभूति हो रही है प्रथम अंक पर पाठकों की उत्साहजनक प्रतिक्रिया के लिए सभी को साधुवाद।

अंतस् के माध्यम से आप सभी से मैं रूबरू हो रहा हूँ इसकी मुझे खुशी है। संस्थान राजभाषा प्रकोष्ठ के वार्षिक कार्य-कलापों में संस्थान परिसर के सभी सदस्यों के सहयोग के लिए मैं सभी का अभिनंदन करता हूँ।

संविधान के अनुच्छेद 351 में निर्धारित किया गया है कि "अष्टम् अनुसूची में वर्णित अन्य भारतीय भाषाओं के रूप, शैली और पद बंधों को आत्मसात करते हुए.....हिंदी भाषा का विकास करना संघ सरकार का दायित्व है।"

मैं उम्मीद करता हूँ संस्थान साहित्यिक पत्रिका **अंतस्** के माध्यम से हिंदी भाषा के विकास में सार्थक भूमिका निभाता रहेगा। पत्रिका के सफल प्रकाशन पर **हार्दिक बधाई**। ■■

संजय गो. धांडे

संजय गो. धांडे

उपनिदेशक की दृष्टि में...

मुझे इस बात की बड़ी प्रसन्नता है कि भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर अपनी हिंदी साहित्यिक पत्रिका **अंतस्** के द्वितीय अंक के साथ आपके समाने उपस्थित हुआ है। प्रथम अंक पर पाठकों की सकारात्मक प्रतिक्रिया ने **अंतस्** के रचनाकारों की रचनाधर्मिता के निर्वहन के आनंद को दुगुना कर दिया है।

वैश्वीकरण के वर्तमान युग में हिंदी भाषा के प्रायोगिक फ़लक का विस्तार हुआ है; आवश्यकता है बदलती परिस्थितियों में हम यथा-संभव अपने सहयोग से हिंदी भाषा की भारत की राजभाषा के रूप में पहचान को और सुदृढ़ करें।

इस अवसर पर राजभाषा के कार्य से जुड़े समस्त सदस्यों का आभार प्रकट करता हूँ एवं संस्थान के परिसर-वासियों से अनुरोध करता हूँ कि राजभाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार में अपना अमूल्य सहयोग प्रदान कर गर्व का अनुभव करें।

शुभकामनाओं सहित ■■

सुरेश श्रीवास्तव

सुरेश चन्द्र श्रीवास्तव

संपादक की कलम से...

अंतस् का द्वितीय अंक आपको समर्पित है। प्रथम अंक पर मिश्रित किन्तु उत्साहजनक प्रतिक्रिया के लिये आपको धन्यवाद! आईआईटी कानपुर के बाहर से भी रचनाएं प्राप्त हुई हैं जिनमें से कुछ इस अंक में सम्मिलित हैं। संक्षिप्त उपोद्घात के रूप में मैं यही कहना चाहता हूँ कि वैश्वीकरण और भूमण्डलीकृत संस्कृति के मध्य स्थानीय, संदर्भगत कथन का अपना एक महत्व है। आज जब विश्व के किसी भी भाग में बैठकर आप सुदूर के उत्पाद का रसास्वादन कर सकते हैं, स्थानीय और अ-व्यवसायी लेखन पर ध्यान देने की पूरी ऐतिहासिक आवश्यकता है। मैं मानता हूँ कि आज जब सारे मॉल्स दशहरी, चौसा और हापुस आम बेच रहे हैं आप अपने देशी आम का स्वाद नहीं भूल गये हैं। अंतस् का यह अंक देशी आमों की तरह, आपके परिसर की सहज अभिव्यक्ति का नूमना लेकर आई है। अंतस् टीम को आशा है आप इसे सराहेंगे। मेरा आपसे निवेदन है कि यदि यह प्रयोग आपको सार्थक लगता है तो अपने लेखों, कथाओं, कविताओं आदि के द्वारा इसमें सम्मिलित होइये। यह नितान्त असम्भव नहीं है कि यदि आप इससे जुड़ जायें तो यह पत्रिका देश में हिंदी लेखन के स्थापित केन्द्रों तक पहुँच जाये।

संस्थान के सहयोग और अंतस् टीम के कठिन परिश्रम की सराहना करते हुए- शुभेच्छा सहित। ■■

अरुण कुमार शर्मा

अरुण कुमार शर्मा

आपकी बात

प्रिय, पाठक, आपके प्रोत्साहन के लिए धन्यवाद।

पत्रिका के पठन के पश्चात् मन के उद्‌गार यही है कि पत्रिका के प्रकाशन में बहुत अधिक परिश्रम किया गया है। पत्रिका में उपलब्ध सभी रचनाएं पठनीय एवं उत्तम कोटि की हैं।

श्री एस पी सिंह
भारत सरकार
रक्षा मंत्रालय (गु.आ.म.नि.)
गुणता आश्वासन स्थापना (फील्ड गन)
अरमापुर डाकघर, कानपुर

यह पत्रिका अत्यंत मनोरम एवं सुरुचिपूर्ण है। इसके लेख अत्यंत प्रभावी, ज्ञानवर्धक हैं। मुद्रण, आवरण पृष्ठ, विषय वस्तु व संकलन सभी उत्कृष्ट हैं। मुझे आशा है कि आप इस पुनीत कार्य को जारी रखेंगे।

के तिवारी
प्राचार्य
केन्द्रीय विद्यालय, आईआईटी कानपुर

'अंतस्' के लेख सारगर्भित एवं सुरुचिपूर्ण हैं। इस अंक में आप द्वारा हिन्दी के प्रचार-प्रसार हेतु किया गया प्रयास अत्यन्त सराहनीय एवं अनुकरणीय है।

डॉ. टी सी शमी
वैज्ञानिक एफ एवं राजभाषा अधिकारी
भारत सरकार, रक्षा मंत्रालय

पत्रिका का कलेवर व सामग्री चयन उत्कृष्ट है। 'मैं साहित्य क्यों पढ़ता हूँ' लेख हर व्यक्ति को आत्मचिंतन करने के लिए मजबूर करता है तथा साथ ही यह भी सुझाता है कि हम साहित्य के महत्व को समझें। इसी प्रकार 'परीक्षा' एवं 'कुछ तेरी आँखों का जादू' कविता आज के समाज के युवा मन की धड़कनों की गूँज से हमें परिचित कराती है। इसके साथ-साथ निदेशक प्रोफेसर संजय गो. धांडे के शिक्षा, सृजनशीलता से समाज को अभिप्रेरित करने वाले विचार उल्लेखनीय हैं। पत्रिका में प्रकाशित लेखों से पत्रिका की गुणवत्ता बढ़ी है। 'शहीदों के परिवार की व्यथा ' कविता सैनिकों के समर्पण एवं उनके बलिदान की वह गाथा है जो मन को फिर से एक बार सोचने के लिए मजबूर करती है कि हमनें अपने देश एवं समाज के लिए अब तक क्या किया है?

डॉ जयन्ती प्रसाद नौटियाल
सहायक महाप्रबंधक
प्रधान कार्यालय
कार्पोरेशन बैंक
मंगलूर - कर्नाटक

लेखकों की मौलिकता एवं प्रस्तुतीकरण सराहनीय है।

शरद दुरेहा
(कर्नल)
वरिष्ठ गुणवत्ता आश्वासन अधिकारी
त्वरित डाक सेवान्तर्गत
भारत सरकार
रक्षा मंत्रालय (गु.आ.म.नि.)
वरिष्ठ गुणता आश्वासन स्थापना
(सामान्य भंडार) जी.क्यू.ए.कॉम्पलेक्स
नैपियर रोड, कानपुर

आकर्षक कलेवर तथा स्तरीय सामग्री से समृद्ध 'अंतस्' की भावना विभिन्न विधाओं के रूप में साकार हुई है।

प्राचार्य
केन्द्रीय विद्यालय
वायु सेना स्टेशन, चकेरी
कानपुर

पत्रिका प्रारंभ से अंत तक आकर्षक एवं पठनीय है जिसमें संस्थान की गतिविधियों के छाया चित्र सहित साहित्यिक, सांस्कृतिक, सामाजिक विषयों से परिपूर्ण लेख एवं कविताओं को संग्रहित किया गया है। इससे आपकी सांस्कृतिक अभिरुचि का भी दर्शन होता है।
'परीक्षा', 'शहीदों के परिवार की व्यथा', 'गधे का दिमाग' रचनाएं रुचिकर लगी।

विकास श्रीवास्तव
हिन्दी अधिकारी
दि न्यू इण्डिया एश्योरन्स कम्पनी लिमिटेड
क्षेत्रीय कार्यालय, कानपुर

पत्रिका में विविध विषयों पर प्रकाशित लेख व रचनाएँ भावपूर्ण, रोचक और ज्ञानवर्धक हैं। संस्थान की साहित्यिक, सांस्कृतिक गतिविधियों, विशेष कार्यक्रमों की सचित्र झलकियाँ आकर्षक एवं सराहनीय हैं।
अंततः 'अंतस्' राजभाषा पत्रिका की विषय वस्तु, प्रस्तुतीकरण, संपादन कौशल सभी कुछ स्तरीय है। पत्रिका संपादन से जुड़े संस्थान के सभी सदस्यों को बधाई एवं आगामी अंकों के लिए शुभकामनाएं।

मृत्युंजय कुमार अवस्थी
राजभाषा अधिकारी
हिन्दुस्तान एरोनॉटिक्स लिमिटेड
परिवहन वायुयान प्रभाग
कानपुर

आकर्षक कलेवर तथा रोचक सामग्री से युक्त भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर की वार्षिक हिन्दी पत्रिका 'अंतस्' का प्रथम अंक प्राप्त हुआ। एक प्रौद्योगिकी संस्थान में हिन्दी पत्रिका निकालने हेतु आपके संस्थान का निर्णय तथा इस निर्णय को कार्यान्वित किये जाने में निहित आपका परिश्रम दोनों ही सराहनीय हैं।
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानों के अध्यापक तथा छात्र, विज्ञान तथा तकनीकी विषयों के शोध लेख भारत की राजभाषा हिन्दी में लिखें, इस दिशा में प्रयास हेतु हमारी समस्त शुभकामनाएं स्वीकार करें।

नागेन्द्र कुमार
एसोसिएट प्रोफेसर
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान रुड़की

पत्रिका का आवरण एवं साज-सज्जा अत्यंत सुंदर है। राजभाषा हिन्दी से संबंधित कार्यकलापों की जानकारी से पता चलता है कि आप सबके सामूहिक प्रयासों से आपके कार्यालय में राजभाषा का प्रसार बढ़ रहा है। सभी रचनाएँ रोचक एवं ज्ञानवर्धक होने के साथ-साथ कर्मचारियों/अधिकारियों की सृजनशीलता की परिचायक हैं।

संतोष सोहगौरा
हिन्दी अधिकारी
डॉक्टर हरीसिंह गौर केन्द्रीय विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.)

संकेतक

आपकी बात
पाठकों के पत्र — vi

विशेष
44वां दीक्षान्त–समारोह — 1

गुरू-दक्षिणा
पद्मविभूषण एन आर नारायण मूर्ति — 2

साहित्य-यात्रा
- माँ मैं कायर नहीं (कहानी) — 4
- यादें (कविता) — 6
- चवन्नी (कहानी) — 7
- माता बनाम आया (कविता) — 7
- मानवता की मृत्यु — 8
- आई आई टी कानपुर में सहभागी सतर्कता की उपादेयता (पुरस्कृत निबन्ध) — 9
- एक धुंधली सी परछाई (कविता) — 10
- निर्दयी नेतृत्व (कविता) — 10
- अनुपमा (कविता) — 10
- वर्तमान भारत (लेख) — 11
- कानपुर शहर-महिलायें, आई.आई.टी. — 12
- पैसा (कविता) — 13
- रूठ गई गंगा की धारा (कविता) — 13
- बदलते जमाने के साथ बदलती शिक्षा — 14
- आपकी याद (कविता) — 14

अनुचिंतन
- मधुशाला–कल्पना और भावना का सहज रूप — 15
- एंटीगोनी–त्रासदी के जीवंत चित्रण का काव्यरूपक (शोधपरक लेख) — 16

बौछार
- आम... — 19
- आईआईटी में तीन दशक — 21
- सांभा की चिट्ठी, गब्बर के नाम — 23

भाषा विज्ञान
- हिंदी और उर्दू के छंदों में ध्वन्यात्मक साम्यता — 25

जीवन-सौरभ
- आलस्य का संसार दुख का आगार — 28

बाल-बत्तीसी
- घमण्ड का नतीजा — 29

सादर अनुरोध

- 'अंतस्' के आगामी अंक में प्रकाशन हेतु अपनी रचनायें शीघ्रातिशीघ्र भेजने का कष्ट करें।
- रचनायें यथासंभव टाइप की हुई हों, रचनाकार का पूरा नाम एवं पद का उल्लेख अपेक्षित है।
- रचना की विषयवस्तु प्रौद्योगिकी, विज्ञान अथवा मानविकी विषयों पर आधारित होनी चाहिए।
- आवश्यकतानुसार लेखों में शामिल छायाचित्र, आंकड़ों से संबंधित आरेख स्पष्ट होने चाहिए।
- प्रयुक्त भाषा सरल, स्पष्ट एवं सुवाच्य हिंदी-भाषा हो।
- अनूदित लेखों की प्रामाणिकता अवश्य सुनिश्चित करें। अनुवाद में सहायता हेतु संस्थान राजभाषा प्रकोष्ठ से संपर्क करें।
- रचनायें मौलिक एवं अप्रकाशित होनी चाहिए।

स-आभार
संपादन मंडल

- नोट-पत्रिका में प्रकाशित रचनाओं की मौलिकता, तार्किकता एवं सत्यता हेतु लेखकगण उत्तरदायी हैं।

प्रेक्षागृह

44 वाँ दीक्षान्त समारोह

दिनांक 2 जून, 2012 को संस्थान के 44 वें दीक्षान्त समारोह का आयोजन किया गया । 'मेट्रोमैन' के नाम से विख्यात **पद्म विभूषण श्री ई श्रीधरन** इस समारोह के मुख्य अतिथि रहे । भव्य दीक्षान्त समारोह का आयोजन संस्थान स्थित प्रेक्षागृह (ऑडीटोरियम) में किया गया । इस दीक्षान्त समारोह में 633 पूर्वस्नातक, 401 अधिस्नातक तथा 101 विद्यावाचस्पति विद्यार्थियों को उपाधियाँ प्रदान की गईं । इस अवसर पर देश तथा कानपुर शहर के प्रमुख शिक्षाविदों, समाज सेवियों एवं छात्र- छात्राओं के अभिभावकों को आमंत्रित किया गया था। दीक्षान्त भाषण श्री ई. श्रीधरन ने दिया जबकि कार्यक्रम की अध्यक्षता संचालक मंडल के अध्यक्ष प्रो. एम आनन्दकृष्णन ने की। दीक्षान्त समारोह के मुख्य अतिथि डॉ ई श्रीधरन ने अपने दीक्षान्त भाषण में सीनेट के सदस्यों, छात्रों तथा अभिभावकों को संबोधित करते हुए कहा कि "इस समारोह में उपस्थित होकर मैं सम्मानित महसूस कर रहा हूँ।" उन्होंने कहा कि "भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान के युवा इंजीनियरों से मिलकर मुझे बेहद खुशी मिली है।" संस्थान की उपलब्धियों का बखान करते हुए उन्होंने भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर को विश्वस्तरीय वैज्ञानिक एवं इंजीनियर पैदा करने वाला देश का एक अग्रणी संस्थान बताया। भारतीय रेलवे के साथ अपने अनुभवों को बाँटते हुए भा प्रौ सं. कानपुर के द्वारा संचालित भारतीय रेल के लिए आधारभूत अनुसंधान कार्यों तथा सुरक्षा उपकरणों की खोज के लिए संस्थान की भूरि-भूरि प्रशंसा की। दीक्षांत भाषण के अगले चरण में उन्होंने उपाधि प्राप्त छात्रों को बधाई देते हुए कहा कि उन्हें गर्व होना चाहिए कि उन्होंने देश के एक उत्कृष्ट तकनीकी (प्रौद्योगिकी) संस्थान से अपना अध्ययन कार्य पूरा किया है। आशीर्वचन स्वरूप डॉ ई श्रीधरन ने समाज व राष्ट्र के संदर्भ में अभियांत्रिकी शिक्षा की महत्ता के बारे में विस्तार से बताते हुए छात्रों से कहा कि मानव निर्माण से लेकर युग निर्माण की प्रक्रिया में अभियंताओं की बहुत बड़ी भूमिका होती है, अतः वे लोग पूरी तन्मयता व तत्परता के साथ अपने प्रौद्योगिकीय (तकनीकी)ज्ञान का उपयोग करते हुए समाज व देश की सेवा में लग जाएं। प्रकृति के साथ सामंजस्य बनाते हुए, समाज व राष्ट्र को उत्तरोत्तर प्रगति के पथ पर ले जाने तथा देश की आर्थिक स्थिति को सुदृढ़ बनाने में उनका सहयोग अपेक्षित होगा।

अपने दीक्षान्त-भाषण के अंत में उन्होंने सभी छात्रों के उज्ज्वल भविष्य की कामना की तथा आयोजन समिति के प्रति अपनी

कृतज्ञता प्रकट करते हुए सभी का धन्यवाद किया।

दीक्षांत समारोह के दौरान अलग-अलग क्षेत्रों में उत्कृष्ट प्रदर्शन करने वाले निम्नवर्णित छात्र-छात्राओं को पदक (मेडल्स) से अलंकृत किया गया ।

राष्ट्रपति स्वर्ण पदक
सुभायू चटर्जी (भौतिकी विभाग)
अंकित कुमार (संगणक विज्ञान एवं अभियांत्रिकी विभाग)
आशीष गुप्ता (संगणक विज्ञान एवं अभियांत्रिकी विभाग)

निदेशक स्वर्ण पदक
तेज प्रताप (विद्युत अभियांत्रिकी विभाग)

रतन स्वरूप मैमोरियल पुरस्कार
अभिनव प्रतीक (यांत्रिक अभियांत्रिकी विभाग)

डॉ. शंकर दयाल शर्मा पदक
शौर्यदीप भट्टाटार्य (रासायनिक अभियांत्रिकी)

संस्थान के निदेशक प्रो. संजय गो. धांडे ने उपाधि प्राप्त समस्त छात्र/छात्राओं को अपनी हार्दिक शुभकामनाएं देते हुए उनसे आह्वान किया कि वे अपने ज्ञान, दृढ़ निश्चय एवं जोश से समाज में परिवर्तन ला सकते हैं। उनको अपने इस जोश को भविष्य में भी जारी रखना होगा । एक अगुवा के रूप में उन्हें व्यवसाय एवं सामाजिक क्षेत्र में गुणात्मक क्रांति के लिए सतत् प्रयास करना होगा । सदैव अपने देश वासियों की मदद के लिए तैयार रहना होगा । उत्कृष्टता मानकों के साथ ऐसी नीतियाँ विकसित करने के लिए सदैव तैयार रहना जिससे समाज का कोई भी वर्ग विकास की दौड़ में पीछे न रहे । ■■

गुरु-दक्षिणा

पद्मविभूषण श्री एन आर नारायण मूर्ति

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर के शैक्षणिक एवं शोध-कार्यों को विश्वस्तरीय पहचान दिलाने के लिए संस्थान के पूर्व छात्र गुरूदक्षिणा के रूप में संस्थान के संसाधनों को सुदृढ़ करते रहे हैं। निश्चित रूप से पूर्व छात्रों द्वारा उपलब्ध कराई गई निधि से संस्थान की शैक्षणिक एवं शोध सुविधाओं में मजबूती आई है। संस्थान के पूर्व छात्र समय-समय पर संस्थान का भ्रमण करते रहते हैं और संस्थान की मदद करने के लिए सदैव तत्पर रहते हैं। इस लेख में हम आपका परिचय ऐसे ही एक अंतर्राष्ट्रीय लब्धप्रतिष्ठित पूर्व छात्र पद्मविभूषण श्री एन आर नारायण मूर्ति से करा रहे हैं। श्री मूर्ति का जन्म 20 अगस्त सन् 1946 को कर्नाटक के मैसूर जिले में हुआ था। श्री मूर्ति मृदुभाषी, मिलनसार एवं सामाजिक इंसान हैं। श्री मूर्ति अपने दृढ़ नेतृत्व-कौशल के लिए भी जाने जाते हैं। श्री मूर्ति ने सन् 1967 में मैसूर विश्वविद्यालय से विद्युत अभियांत्रिकी में स्नातक की उपाधि प्राप्त की। इसके पश्चात सन् 1969 में भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर से एम टेक की पढ़ाई पूरी की।

श्री मूर्ति इन्फोसिस कंपनी के संस्थापक अध्यक्ष रहे हैं। सन् 1981 में अपने छह साथियों के साथ मिलकर मात्र 10 हजार रूपये की पूँजी से उन्होंने इस कंपनी की शुरूआत की। दिलचस्प बात यह है कि श्री मूर्ति ने यह 10 हजार रूपये ऋण के रूप में अपनी पत्नी से लिए थे। कंपनी की स्थापना से पूर्व श्री मूर्ति भारतीय प्रबंधन संस्थान अहमदाबाद में चीफ सिस्टम प्रोग्रामर के रूप में भी कार्य कर चुके हैं। 80 का दशक श्री मूर्ति के लिए थोड़ा मुश्किल भरा रहा परन्तु सन् 1991 में कंपनी उस समय तेजी से अपने शिखर की तरफ बढ़ी जब भारत में उदारीकरण की शुरूआत हुई । श्री मूर्ति की अध्यक्षता में कंपनी ने वर्ष दर वर्ष उन्नति की जिसके फलस्वरूप कंपनी सन् 1999 में NASDAQ से पंजीकृत हुई। श्री मूर्ति ने अलग- अलग हैसियत से कंपनी को अपनी सेवाएं दीं हैं। विशालतम् पूंजी वाली कंपनी का संचालन करने के बावजूद भी श्री मूर्ति की जीवन शैली में किसी भी प्रकार का परिवर्तन नहीं आया है। श्री मूर्ति आज भी कार चलाना नहीं जानते हैं। प्रत्येक शनिवार उनका ड्राइवर साप्ताहिक अवकाश पर रहता है और श्री मूर्ति अपनी पत्नी के साथ बस स्टॉप पर जाते हैं जहाँ से वे कंपनी की बस पकड़कर अपने कार्यालय पहुँचते हैं। श्री मूर्ति की विश्वख्याति को ध्यान में रखते हुए एवं कुख्यात चंदन तस्कर वीरपप्न द्वारा डॉ राजकुमार के अपहरण के पश्चात् भारत सरकार के तत्कालीन गृहमंत्री ने श्री मूर्ति एवं श्री प्रेमजी

को जेड सुरक्षा उपलब्ध कराने का प्रस्ताव रखा था लेकिन श्री मूर्ति ने बड़ी ही सदाशयता से इसे अस्वीकार कर दिया था।

श्री मूर्ति ने ग्लोबल डिलीवरी मॉडल के अभिकल्प एवं कार्यान्वयन का कार्य किया है जिसे भारत से ऑउटसोर्सिंग होने वाली आई टी सेवाओं के क्षेत्र में भारी सफलता का एक आधार माना जाता है। उन्होंने भारत में कई महत्वपूर्ण संगठित शासकीय उपक्रमों का नेतृत्व किया है। इसके अलावा उन्होंने एशिया के कई देशों के लिए आई टी सलाहकार के रूप में भी अपनी सेवाएं प्रदान की हैं । उन्होंने एचएसबीसी बोर्ड, फोर्ड फाउन्डेशन, यू एन फाउन्डेशन में भी अपनी सेवाएं दी हैं। उन्होंने 2007 से 2012 तक यूनिलीवर के सदस्य के तौर पर भी कार्य किया है । श्री एन आर नारायण मूर्ति ने वार्टन स्कूल, इंडियन स्कूल ऑफ बिजनेस हैदराबाद, रोड्स ट्रस्ट एवं सूचना प्रौद्योगिकी अंतर्राष्ट्रीय संस्थान बंगलौर की शासकीय परिषदों (बोर्ड) में भी अपनी सेवाएं प्रदान की हैं ।

सन् 2005 में श्री मूर्ति को दस सर्वाधिक प्रंशसित अंतर्राष्ट्रीय उद्योगपतियों में स्थान मिला है। उन्होंने वर्ष 2004 से वर्ष 2006 तक लगातार तीन वर्ष तक भारत के सर्वाधिक शक्तिशाली सीईओ के रूप में (ईकानॉमिक टाइम्स की सूची के अनुसार) प्रथम स्थान हासिल किया है। उन्हें बिजनेस वीक, टाइम, सीएनएन, फार्चून, इंडिया टुडे, बिजनेस स्टैण्डर्ड एवं फाइनैन्शियल टाइम्स द्वारा सफलतम् व्यावसायी एवं प्रवर्तकों (इनोवेटर्स) की रैंकिंग में भी स्थान प्राप्त हुआ है ।

श्री मूर्ति को भारत सरकार द्वारा पद्म विभूषण, पद्मश्री, फ्रांस सरकार द्वारा Legion d' honneur एवं ब्रिटिश सरकार

द्वारा CBE पुरस्कार तथा फोर्ब्स एवं सीएनबीसी द्वारा क्रमशः फोर्ब्स लाइफटाइम एचीवमेंट अवार्ड एवं सीएनबीसी लाइफटाइम एचीवमेंट अवार्ड और फार्चून मैगज़ीन द्वारा Asia's businessman of the Year पुरस्कार प्रदान किया गया है। वह Ernst & Young World Entrepreneur एवं Max Schmidheiny Liberity पुरस्कार पाने वाले प्रथम भारतीय हैं। उनको आईईईई द्वारा Hoover and Weber मेडल भी प्रदान किया गया है। श्री मूर्ति को लगभग 25 राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालयों द्वारा मानद उपाधियाँ प्रदान की गई हैं। इनके अलावा श्री मूर्ति को राष्ट्रीय तथा अंतर्राष्ट्रीय स्तर की कई और संस्थाओं की ओर से भी सम्मान एवं पुरस्कार प्राप्त हुए हैं। श्री मूर्ति भारतीय राष्ट्रीय अभियांत्रिकी अकादमी के फैलो तथा यू एस राष्ट्रीय अभियांत्रिकी अकादमी के फॉरेन सदस्य भी हैं।

श्री मूर्ति ने भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर के संगणक विज्ञान एवं अभियांत्रिकी विभाग के भवन का निर्माण कराया है। इसके अतिरिक्त उन्होंने छात्रावासों के नवीनीकरण के साथ-साथ संस्थान के विभिन्न विभागों की शोध सुविधाओं को भी उच्चीकृत कराने के लिए आर्थिक अनुदान के रूप में अपना सतत् सहयोग प्रदान किया है। श्री मूर्ति समय-समय पर संस्थान का भ्रमण करते रहे हैं और हमेशा संस्थान एवं देश को विश्वस्तरीय पहचान दिलाने के लिए शिक्षकों एवं विद्यार्थियों को प्रेरित करते रहते हैं ।

श्री मूर्ति को राजनीति में आने के लिए पार्टियों की तरफ से भी कई प्रस्ताव आए हैं लेकिन उन्होंने राजनीति से हमेशा उचित दूरी बनाकर रखी है। एक साधारण व्यक्ति से लेकर इन्फोसिस के रूप में इतना विशाल साम्राज्य खड़ा करने के लिए हम सभी को श्री मूर्ति से प्रेरणा लेनी चाहिए। आज इन्फोसिस कंपनी में 400 ऐसे कर्मचारी हैं जो अरबपति हैं। श्री मूर्ति की तरह हम सभी को देश के विकास में अपना योगदान देना चाहिए जिससे भारत विकासशील देश से एक विकसित देश बन सके ।

संस्थान अपने सभी पूर्व छात्रों का आभारी है तथा आशा करता है कि पूर्व छात्र भविष्य में भी इसी तरह से संस्थान की मदद करते रहेंगे जिससे संस्थान को अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर सर्वश्रेष्ठ संस्थानों की कतार में सबसे आगे खड़ा किया जा सके । ■■

जगदीश प्रसाद
राजभाषा प्रकोष्ठ

भारत के सिरमौर

जिन्होंने भारत को दुनिया के सामने विश्वगुरू के रूप में खड़ा कर दिया ऐसे ही कुछ महान व्यक्तित्वों से मैं आप सब को हर श्रृंखला में परिचित कराऊँगी। इस अंक में मैं स्वामी विवेकानन्द जी के एक विचार को प्रस्तुत करती हूँ। स्वामी जी के ग्रंथो के अध्ययन के उपरान्त मुझे सदा ही अत्यन्त आनन्द की अनुभूति हुई, कई बार नेत्रों से अश्रुपात भी हुआ। स्वामी जी की मानसिक संरचना का परिदृश्य मेरे मानस पटल पर सदैव के लिए अंकित हो गया है। स्वामी जी ने सम्पूर्ण धरती पर सनातन धर्म का परचम लहराया और धर्म और दर्शन के क्षेत्र में भारत को विशेष स्थान दिलाया। स्वामी जी के शब्दों में -

'जीवात्मा के अमरत्व का प्रश्न सदैव रहा है किन्तु साथ ही प्रकृति का परिवर्तन भी सत्य है सब कुछ बदल रहा है बीज से वृक्ष और फिर वृक्ष से बीज तक क्रम चलता रहता है यहाँ तक की नदियों पहाड़ों सबका क्षय हो रहा है। छोटे बच्चे में भावी मनुष्य की समस्त संभावनाएं निहित हैं अतः तुम इस पृथ्वी पर जड़ तत्व का एक भी परमाणु घटा बढ़ा नहीं सकते। जिस प्रकार एक ही जीवन में शैशव, यौवन, वार्धक्य आदि विविध अवस्थाएं देखते हैं, उसी प्रकार जीव से पूर्ण मानव पर्यन्त एक अविछिन्न जीवन एक ही श्रृंखला है। अतः किसी भी अणु की वृद्धि नहीं होती नाश नहीं होता केवल रूप परिवर्तन ही होता है।' ■■

सुनीता सिंह

साहित्य-यात्रा

माँ मैं कायर नहीं

देश के एक उच्चतम संस्थान का हॉस्टल, कैंटीन से उठती हुयी काफी की महक और गलियारों से आता हुआ छात्रों का उल्लास भरा शोर; आज पियूष को आहत कर रहे थे। हॉस्टल का ये विशिष्ट वातावरण कल तक उसके अंदर एक स्फूर्ति और ताजगी भर देता था और फ्रेंड्स के साथ रूम में बैठ कर वह भविष्य की नयी-नयी तकनीकी डिजाइन करता था। किन्तु आज वह हताशा के गहन अन्धकार में जा पहुँचा था। अभी कुछ महीने पूर्व ही इस संस्थान में आने का गौरव उसे प्राप्त हुआ था। गृह-नगर के प्रत्येक घर में उसके इस अभूतपूर्व चयन पर चर्चा हुई थी। लेकिन आज मिड-सेम के दौरान लगातार दूसरा पेपर बिगड़ने से वह व्याकुलता की सीमा के लाल निशान पर जा पहुँचा था। यद्यपि वह समझ रहा था कि यह दौर अचानक से नहीं आ गया है। दरअसल यहाँ अध्ययन के कुछ बदले हुए स्वरूप के साथ अब तक वह अपना सामंजस्य नहीं बैठा पाया था। संभवतः उसके सरल मन-मस्तिष्क ने एक प्रतिष्ठित संस्थान में हुए अपने चयन को ही जीवन की अंतिम उपलब्धि मान लिया था और इस सोच के चलते उसने एक नये सिस्टम के साथ तालमेल बैठाने या समय एवं परिस्थितियों के अनुरूप स्वयं को ढालने के प्रयास ही नहीं किये थे। प्रारंभ के कुछ दिनों तक तो उसने अपनी समस्याओं को मित्रों के समक्ष रखा भी किन्तु; जैसे-जैसे दिन गुजर रहे थे उसकी सोच भी बदलती जा रही थी। अब किसी के साथ अपनी समस्या शेयर करने में उसे कठिनाई महसूस होने लगी थी। यह सोचकर कि वह अन्य साथियों के साथ नहीं चल पा रहा है, वह स्वयं को ही कमजोर मानकर क्रमशः हीन भावना का शिकार होने लगा। अपरिचित सी व्यवस्था एवं इससे कभी न उबर पाने का डर उस पर हावी हो गया था। साथियों से दूरियाँ बढ़ गयी थी और वह गुम-सुम सा रहने लगा था।

नये सिस्टम को समझने एवं उसके अनुसार स्वयं को ढालने की जगह उसने स्वयं को ही कमतर आंकने की भारी भूल की थी। लेकिन अब तो देर हो चुकी थी। उसके प्राप्तांक संस्थान के मानक स्तर से नीचे आ चुके थे। घर वालों को फोन पर वह केवल इतना बता पाया था कि पेपर बिगड़ गया है। अब वह क्या करेगा? साथी क्या सोंचेंगे? अपने गृहनगर किस मुँह से जाएगा? इत्यादि सोचते-सोचते कितने घंटे बीत गए उसे पता ही न चला। कुछेक कमरों को छोड़कर लगभग सारा हॉस्टल अँधेरे के आगोश में जा चुका था।

सुबह के तीन बज चुके थे। पास ही पटरियों से गुजर रही रात्रिकालीन सन्नाटे को तोड़ती हुई ट्रेन की कूक भी पियूष का ध्यान नहीं भंग कर सकी थी। नींद कोसों दूर थी। वह तो बस सोचे जा रहा था। माँ ने तो दिलासा दे दी है कि हिम्मत नहीं हारना, सब ठीक हो जायेगा। परन्तु उनको कैसे बताएगा कि उसे अब संस्थान से निकाला भी जा सकता है। अपने गृहनगर लौटकर वह लोगों से क्या कहेगा? लोग तो यही कहेंगे कि पियूष इस संस्थान के लायक ही नहीं था। और हर बार वह हीन भावना से भर उठता। शायद मैं इस संस्थान के लिए उपयुक्त नहीं हूँ वरना मेरे साथ ही ऐसा क्यों? उसे मात्र हताशा भरे दृश्य ही दिखाई दे रहे थे, जैसे वह अपने कमरे से निकल रहा है और सभी उसे ही घूर रहे हैं एक असफल व्यक्ति के रूप में । नहीं नहीं.....मैं इनसे नजरें नहीं मिला सकूँगा। मैं यहाँ रुकूंगा ही नहीं। वह कमरे से बाहर आ गया। लेकिन वह जायेगा कहाँ? अब तो घर भी नहीं जा सकता, अब क्या करेगा? सुबह की हल्की ठंड में भी उसकी हथेलियों पर पसीना आ रहा था। अपने कैरिअर से कहीं ज्यादा लोक-लाज का भय उसके मन-मस्तिष्क पर ऐसा दबाव बना रहा था कि उसकी मनोदशा बिगड़ती चली जा रही थी। वह अवसाद के गहन अँधेरों में जा चुका था जहाँ उसे अब कोई रास्ता नजर नहीं आ रहा था। आखिरकार एक वीभत्स निर्णय के साथ वह रेल-पटरी की ओर बढ़ने लगा। अवसाद के जंगल में भटकते हुए वह रेल-पटरियों के काफी नजदीक आ गया। अँधेरा उसके इस अवसाद पर मरहम का काम कर रहा था। क्योंकि दिन निकलने पर उस समाज का सामना होना था जिससे वह डर रहा था। वह ट्रेन का इंतजार करता हुआ पटरी के पास ही बैठ गया। यद्यपि जीवन द्वंद लगातार चल रहा था परन्तु कायरता हर बार विजित हो जाती और वह ट्रेन की प्रतीक्षा में और अधिक व्याकुल हो जाता। अचानक परिदृश्य परिवर्तित हुआ।

उसकी नज़र गाय के एक बछड़े पर पड़ी जो कुछ ही दूरी पर पटरी से उठने का असफल प्रयास कर रहा था। प्रकृति-प्रदत्त कौतुहल अभी भी विद्यमान था। उसने पास जाकर देखा बछड़े का एक पैर काम नहीं कर रहा था। जीवन के द्वंद में हार चुके पियूष पर इस घटना का कुछ विशेष प्रभाव नहीं पड़ा। समय आगे चला और अब दूर से आ रही ट्रेन की कूक भी सुनायी देने लगी। अपनी विपरीत सोच के चलते कमजोर हो चुके पियूष का आत्मनियंत्रण लगभग खत्म हो चुका था। रात्रि के इस अंधकार में अब धीरे-धीरे प्रकाश कण भी मिलने लगे थे। अतः जल्दी से जल्दी वह इस अंधकार में हमेशा के लिए मिल जाना चाहता था।

तभी बछड़ा व्याकुल होकर रम्भाने लगा। सुबह के धुंधलके में दूर कहीं एक आकृति दिखाई देने लगी जो धूल के गुबार के साथ-साथ इसी ओर चली आ रही थी। इस आकृति के समीप आने पर दृश्य स्पष्ट होने लगा। यह एक गाय थी जो अपने बछड़े की करुण पुकार सुनकर पूरी शक्ति के साथ दौड़ती आ रही थी। गति के साथ तेज हो उठी उसकी सांसे नथुनों से निकलकर जमीन से टकरा रही थी, उठते हुये धूल के गुबार उसकी भाव-विव्हलता को व्यक्त कर रहे थे। इस दृश्य को देखकर पियूष विचलित हो गया। बरबस उसे अपना बचपन याद आ गया। पहली रोटी माँगने पर माँ मना कर देती थी कि यह तो गाय माता के लिये है और कितने प्यार से वह गाय को रोटी खिलाता था। उसे दौड़ती आ रही उस गाय में अपनी माँ दिखाई देने लगी। जब मानव से इतर प्राणियों में इतनी करुणा और मातृत्व विद्यमान है तो माँ कितनी व्याकुल हो उठेंगी जब उसे ज्ञात होगा कि उसका बेटा.....।

नहीं नहीं मैं क्या कर रहा हूँ? मैं लोक-लाज के चलते अपने माता-पिता, परिवार को इतना भीषण दर्द कैसे दे सकता हूँ? नहीं नहीं मैं समाज से लड़ सकता हूँ, मैं बहुत कुछ कर सकता हूँ, इस बछड़े को मैं बचा सकता हूँ। अवसाद के गहन अँधेरे में मानो प्रकाश की कोई किरण चमक उठी थी। ट्रेन नजदीक थी। वह बछड़े को बचाने के लिए दौड़ पड़ा। बछड़ा बच गया था; और गाय उसे लगातार चाट रही थी। पियूष की आँखें खुल चुकी थीं। जीवन को सार्थक करने के लिए एक ही नहीं वरन अनेकों काम पड़े हुए हैं। वह जीवों के लिए काम कर सकता है, वह जीवन से हार मान चुके लोगों के लिए काम कर सकता है, वह समाज के हित में कार्य कर सकता है। उसके मन - मस्तिष्क में बड़े नायकों के जीवन-चरित्र उभरने लगे जो विपरीत परिस्थितियों में रहते हुए, कई बार हार कर भी, किन्तु दृढ़ संकल्प एवं कठोर श्रम के द्वारा आखिरकार विजित हुए।

हीं नहीं मैं क्या कर रहा हूँ? मैं लोक-लाज के चलते अपने माता-पिता, परिवार को इतना भीषण दर्द कैसे दे सकता हूँ? नहीं नहीं मैं समाज से लड़ सकता हूँ, मैं बहुत कुछ कर सकता हूँ, इस बछड़े को मैं बचा सकता हूँ। अवसाद के गहन अँधेरे में मानो प्रकाश की कोई किरण चमक उठी थी। ट्रेन नजदीक थी। वह बछड़े को बचाने के लिए दौड़ पड़ा। बछड़ा बच गया था, और गाय उसे लगातार चाट रही थी। पियूष की आँखें खुल चुकी थी। जीवन को सार्थक करने के लिए एक ही नहीं वरन अनेकों काम पड़े हुए हैं। वह जीवों के लिए काम कर सकता है, वह जीवन से हार मान चुके लोगों के लिए काम कर सकता है, वह समाज के हित में कार्य कर सकता है। उसके मन - मस्तिष्क में बड़े नायकों के जीवन-चरित्र उभरने लगे जो विपरीत परिस्थितियों में रहते हुए, कई बार हार कर भी, किन्तु दृढ़ संकल्प एवं कठोर श्रम के द्वारा आखिरकार विजित हुए।

पूर्व दिशा में सोने का गोला लालिमा बिखेरने लगा था। अन्धकार की परतें एक-एक कर छंटती जा रही थी। गाय ने एक बार फिर अपनी बड़ी-बड़ी आँखों से पियूष को देखा, मानो धन्यवाद दे रही हो। गाय का इस तरह से निहारना उसे सुखद लगा। माँ! मैं कायर नहीं..... बड़बड़ाता हुआ वह हॉस्टल की ओर वापस चल दिया। ■■

सोमनाथ डनायक
पदार्थ विज्ञान कार्यक्रम

ओ! माँ तू है कहाँ

कितना निर्दयी है ये जहाँ
मैं अब न आऊँगी यहाँ।।
मेरे रचयिता तू है कहाँ।
मुझे रचकर तू गया कहाँ।।
मैं होती या होता जहाँ,
माँ तेरा दिल और तू खो गई कहाँ।।
मुझे जन्म देते ही तूने अजन्मा कर दिया,
तेरी आँखों ने न नीर बहाया वहाँ,
पर बादलों ने खूब जम कर नहलाया यहाँ।।
खुले आसमान के नीचे धरती की गोद में,
तेरी याद ने माँ मुझे कितना-कितना रुलाया।।
नन्हा दिल तब सहम गया ममतामयी माँ,
जब कुत्तों का झुण्ड आ गया वहाँ।।
ये आँखें तेरी राह तकती रह गईं माँ,
कतरा-कतरा बोटी-बोटी वह मुझे नोंच कर खा गए माँ।।
जन्म लेते ही बाप का मुँह ताका आके यहाँ,
शादी के बाद पति ने दर-दर ठुकराया कहाँ-कहाँ।।
बुढ़ापा आया तो अपनों ने लावारिस छोड़ दिया,
ओ ममतामयी माँ तू है कहाँ, माँ-माँ-माँ।।

रंजना श्रीवास्तव 'सपना'

साहित्य-यात्रा

काल-गति

किसी समय यह भारत था, अध्यात्म योग का प्रबल प्रणेता,
संस्कार, धर्म, करुणा, ममता, नैतिक मूल्यों का अध्येता,
पलक-पाँवड़ों से हम करते, स्वागत थे अपने आगत का,
बोध हमें था, मातृशक्ति की पावनता, मर्यादा का।।

दीन-दुःखी निर्बल की सेवा, होता था अपना प्रथम धर्म,
प्राणि-मात्र के सुख निमित्त ही, होते थे अपने सकल कर्म,
ज्ञान, तपस्या, दान शीलता, ये थे अपने आभूषण
सत्य, सादगी, सहज, सरलता, मानव चरित्र के आकर्षण।।

हाँ, राजा, शासक, न्याय, धर्म, सत्पथ अनुयायी होते थे,
निर्बल, निरीह और याचक के, अवलम्ब पूर्णतः होते थे,
वे साधु तपस्वी विद्वद्जन, जनहित के चिन्तक होते थे
उसी भाँति ही गुरू-शिष्य के, पावन बन्धन होते थे।।

किन्तु काल गति परिवर्तन ने, यह सारा कुछ बदल दिया
मानव क्या? उसका चरित्र, कुल हुआ आज परिवेश नया,
फ्लाइंग हैलो-हैलो द्वारा, अब होता पूजन-आराधन
अधोगर्त में समा गये हैं, लज्जा चरित्र स्व-अनुशासन।।

रीति-नीति से, दया-क्षमा से, वर्तमान निःशेष हुआ है,
मानव-भोग, व्यसन-विलास में, अर्थ काम में लिप्त हुआ है,
मूल्य-ह्रास औ अधः पतन से, मानों जीवन आवृत्त हुआ है,
सद्यः स्थिति इतनी त्रासद, जन-जन का सम्बल लुप्त हुआ है,।।

सत्तासीन हो या अधीन, अब नहीं किसी के मानदण्ड
जहाँ देखिए वही दिखेंगे, उच्छृंखल, लम्पट, उद्दण्ड
जड़ शासक-कुशासन का शासन, उद्भट भ्रमित तथा पथ-भ्रष्ट
चहुँ ओर व्याप्त बस मात्र व्यथा, जन-जन आक्रोशित क्षुब्ध रूष्ट

राष्ट्र राज औ प्रजा धर्म की, अब कोई नहीं महत्ता है,
बस अहंकार, संकीर्ण स्वार्थ, और मिथ्याचार की सत्ता है,
जाति, वर्ग उपवर्गों में, बंट-बंट समाज, भर गया द्वेष
गाँव, मुहल्ले, गली-गली सब, बेगाने हुए हैं आस-पड़ोस।।

कह रहे देश में उन्नति है, पर क्या यह मूल्याधारित है?
अस्मिता राष्ट्र, सत्य, सादगी, अबलायें अभिरक्षित हैं ?
क्या अतीत का गौरव, गरिमा, सुयश कीर्ति वापस आने हैं?
या कि कालगति और नियति से निम्न रसातल में जाने हैं? ■■

वी पी गुप्ता
विधि प्रकोष्ठ

यादें

मैं यादें हूँ, मेरा जीवन संसार हेतु इक गहना है,
सब चाहे नश्वर हो जाये पर मुझे यहीं पर रहना है।

जीवन भर जो घटित हुआ, मुझमें उसका गान नया।
कभी बढ़े थे जो पग आगे, मैं उनका अभियान नया।
वो चले गए अध्याय छोड़ पर मुझे सतत चलना है,
मैं यादें हूँ, मेरा जीवन संसार हेतु इक गहना है।

तेरे जीवन चक्र अंत ने मेरा अस्तित्व बनाया है,
कोई कमी हुई तो जाकर मैंने खुद उसे मिटाया है।
तेरे जीवनक्रम की गाथा को मुझसे ही पलना है,
मैं यादें हूँ मेरा जीवन संसार हेतु इक गहना है।

अथक परिश्रम किया जगत ने मुझको दूर हटाने में
गिरा दिए वह जाम हाय जो खिलते थे मैखाने में,
पर उनको पता नहीं कि गिरकर मुझे और भी बढ़ना है,
मैं यादें हूँ मेरा जीवन संसार हेतु इक गहना है।

लोगों की अवहेलना से मन में यों होती पीड़ा है,
वाणी की बन्दूक चला छल्ली छलनी कर देते सीना है,
इतने प्रयत्नों से भी न समझे कि मुझको अभी न मिटना है,
मैं यादें हूँ मेरा जीवन संसार हेतु इक गहना है।

अच्छा हूँ या बुरा, मुझे तो मन में सबके बसना है,
उनकी जीवन-डोर से अपनेआप को तेज जकड़ना है,
भले ही उनको मिटा दिया पर, अब मेरे संग ही चलना है,

मैं यादें हूँ मेरा जीवन संसार हेतु इक गहना है,
सब चाहे नश्वर हो जाये पर मुझे यहीं पर रहना है। ■■

अनराग कैथल
छात्र

चवन्नी

हुकुम सिंह अपनी बीबी फूलमती और अपने छ बच्चों के साथ खुशी से फूले नहीं समा रहे थे, सुबह से ही पूरे घर में त्योहार जैसा माहौल था। आज हुकुम सिंह की गाय ने एक सुन्दर सी बछिया को जन्म दिया है। गाय को नहला धुलाकर फूलमती ने पहले तो बछिया को दूध पिलाना सिखाया और बाकी दुह लिया। दुहने के बाद दूध को छोटे-छोटे बर्तनों में करनी लगी और एक-एक करके बच्चों को हिदायत देती गयी। पहले तो यह दूध भूमिहाखेड़ के शिवलिंग पर चढ़ाना, फिर गंगा जी में डाल आना। (गंगाजी गाँव के पास से ही होकर गुजरती थीं।) पर हाँ जरा संभाल के। (फूलमती ने) जो थोड़ा सा दूध बचा था गाय को पिला दिया क्योंकि पहले पहल के दूध को देवी देवताओं के हिस्से का माना जाता है। हुकम सिंह छोटे बच्चे बछिया के साथ खेलने में इतने मगन थे कि मानो ये उनके परिवार की नई सदस्य हो।

हुकुम सिंह साहूकार के यहाँ से दो पसेरी गुड़ ले आया क्योंकि नए दूध का खीर जो बनाना था और पड़ोसियों एवं गाय को भी खिलाना था। साहूकार ने भी हुकुम सिंह को कभी रुसवा नहीं किया क्योंकि वो जानता था कि कीमत को सूद समेत फसल कटने पर वसूल ही लेगा। हुकुम सिंह शाम को खा पीकर ये सोचते विचारते सो गये कि अब हमें और बच्चों को भी पीने को दूध मिला करेगा, खीर बनेगी उसमें गुड़ डालकर खाएंगे। कुछ दिन बाद मट्ठा भी मिलेगा। सुबह तड़के-तड़के फूलमती ने गाय को घास खिलाकर पूरा एक थन का दूध बछिया को पिलाकर बाकी तीनों थनों का दूध दुह लिया।

हुकुम सिंह का छोटा भाई केशव गाँव से 15 मील दूर शहर में परिवार के साथ रहता है और वहाँ सरकारी नौकरी करता है। हुकुम सिंह ने फूलमती से कहा कि मुहल्ले वालों को शाम के वक्त खीर पहुँचा देंगे। अभी के दूध में से आधा भाई केशव के यहाँ पहुँचवा दो मैं खेत में जा रहा हूँ।

फूलमती ने बड़े बेटे रामू को दूध एक डिब्बे में भरके दे दिया और गाँव से शहर जाने वाले ताँगे में बैठवा दिया। ताँगेवाले को एक चवन्नी दे दी । रामू दूध लेकर खुशी-खुशी चाचा के यहाँ पहुँचा और दूध व गुड़ देकर बताया कि गाय ने बछिया दी है। चाची ने खीर बनाया और अपने बच्चों के साथ रामू को भी खिलाया।

रामू तीसरे पहर तक वहीं पर खेलता रहा और शाम को चाचा भी दफ्तर से वापस आ गये।

रामू ने चाचा के पैर छुए और गाँव-घर का हाल चाल बताया। केशव ने पूछा भैया कैसे हैं, खेत में क्या-क्या बो रखा है। रामू ने बताया-आधा बीघा चना बोया है और डेढ़ बीघा गेंहूँ है। चाचा जी मुझे वापस भी जाना है टाँगे वाला जाने वाला होगा किराया दे दो ताकि मैं घर वक्त पर पहुँच जाऊँ।

अरे! भईया ने तुम्हें किराया भी नहीं दिया एक चवन्नी ही तो लगती है तुम लोगों का खर्चा ही क्या है गाँव में; पूरी जमीन जोतते हो मुझे क्या मिलता है उसमें से? साल में एक आध बार कुछ भिजवाते हो उसमें भी कभी दवा के पैसे ले जाते हो कभी कुछ। मेरे पास कुछ किराया-विराया नहीं है। दस-बारह मील ही तो है गाँव, पैदल चले जाओ। रामू चाची के पास गया और दूध वाला खाली डिब्बा उठाकर चाची के चरणस्पर्श किये और चल दिया। रामू तेज कदमों से नहर के किनारे-किनारे चला जा रहा था और सोच रहा था कि शहर में आकर चाचा इतने क्यों बदल गये हैं। ■■

सी एस गोस्वामी
यांत्रिक अभियांत्रिकी विभाग

माता बनाम आया

मातृ तत्व और आया-तत्व के अंतर को
मातृभाषा और आया-भाषा के अंतर को,
मातृप्रेम और आया-प्रेम के अंतर को,
मातृज्ञान और आया-ज्ञान के अंतर को,
शायद मेरा समाज
समझकर भी नासमझ है।

वेतनभोगी आया से पीढ़ी का निर्माण?
वेतनभोगी आया से संस्कार का निर्माण
वेतनभोगी आया से व्यक्ति का निर्माण
वेतनभोगी आया से भविष्य का निर्माण
शायद मेरा समाज
जानकर भी अनभिज्ञ है।

माया के आने से माता का जाना हुआ!
माया के आने से आया का आना हुआ!
माया और आया के अभेद्य चक्रव्यूह में,
अबोध संतति का देखो कैसा ह्रास हुआ!! ■■

समीर खांडेकर

मानवता की मृत्यु

सच में आज हम सुविधाओं से परिपूर्ण तो हैं मगर हम सबके दिलों से मानवता समाप्त हो चुकी है। इन्सानियत ही मानव का सबसे श्रेष्ठ आभूषण है, पर हम तो बस मानवता के बिना ही खुद को मानव कहलाते हैं।

हम सबने विज्ञान की सहायता से अपना जीवन तो बहुत ही सहज कर दिया है और साथ ही साथ मृत्यु भी। आज हमें ये मालूम नहीं कि बम के नीचे किसका घर होगा और बंदूक की गोली किसके सर में! पर सबसे बड़ा आश्चर्य ये है कि इन यंत्रों के साथ खेलते-खेलते हम खुद एक यंत्र बन गए हैं। हमने हमारे तंत्र और जीवन के सही मंत्रों को ही पलट दिया है।

26 नवम्बर, 2009 मुंबई में हुआ हमला मानव की क्रूरता का एक परिचायक था। इस हमले के शिकार सभी लोगों की मृत्यु उनकी मृत्यु नहीं, बल्कि मानवता की मृत्यु थी।

हम सब इंसानियत से कोसों दूर आ गए हैं, इसके कई कारण हैं। आज माँसाहारी भोजन करना फैशन बन गया है, और तो और हम इसे अपनी संस्कृति का हिस्सा मानने लगे हैं। हम बड़े शौक से माँसाहार करते हैं पर क्या कभी ये सोचा कि अगर हम जीना चाहते हैं तो उन दूसरे जीवों को भी जीने का अधिकार है।

हम तो केवल अपने स्वाद के लिए उनकी जान लेने पर तुले हैं। हाल ही में अखबार में पढ़ने में आया था कि चीन में 'एक ही बच्चा' का नियम बनाया गया है; तो हर किसी को बेटा ही चाहिए। इस उपभोक्तावादी युग में गर्भाशय से भ्रूण निकालकर बेंचा जा रहा है और कथित कंपनियाँ इसके उपयोग से महँगे साबुन का निर्माण कर रही हैं। इस साबुन का प्रयोग लोग सुन्दरता बढ़ाने के लिए कर रहे हैं। जब मन की ऋजुता शेष नहीं तो इस बाहरी सुंदरता का क्या फायदा।

हमनें तो बहुत ही तरक्की कर ली है। हमने विज्ञान के माध्यम से चाँद तक दौड़ लगा ली है। मगर दो इंसानों के दिलों में दीवार खड़ी की है। आज अगर बीच रास्ते में किसी का ऐक्सीडेन्ट हो जाता है और वह आदमी पानी के लिए तरसता है, पर हम में से कोई आगे जाकर उसे पानी पिलाने के लिए तैयार नहीं होता। हम सोचते हैं अगर मर गया तो फालतू आफत गले पड़ेगी। हमने खुद को बचाये रखने के चक्कर में खुद को ही चार पैर वाला मनुष्य बना लिया है। और ये सब देखकर सवाल उठता है!

'इन्सानियत की रौशनी गुम हो गई है कहाँ
साये हैं आदमी के, आदमी है कहाँ।'

क्या हमने सोचा है इस सबका कारण क्या है? आज हमारी मानसिकता ही बदल गई है। हम सब टी वी देखते-देखते खाते हैं और अखबार पढ़ते-पढ़ते चाय पीते हैं। तो आप क्या समझते हैं कि खाना खाते और चाय पीते समय हम केवल खाना ही खाते हैं और चाय ही पीते हैं। नहीं, बल्कि हम भोजन के साथ-साथ हिंसा, अश्लीलता और भ्रष्टाचार की खबरें भी खाते हैं और पीते हैं, जिसका प्रभाव हमारे स्वभाव पर पड़ता है और वे खबरें हमें खुद से बेखबर कर देती हैं। इस प्रकार हमारा स्वभाव पतित होता चला जाता है और फिर हमारे सामने कोई किसी का खून कर रहा हो कोई किसी लड़की को छेड़ रहा हो या कोई नेता भ्रष्ट आचरण कर रहा हो तो हम बस उसे कल के अखबार में आने वाली एक खबर समझकर अनदेखा कर देते हैं लेकिन हम भूल जाते हैं कि अगर ऐसा ही सब सोचने लग जाएं तो दुनिया से नैतिकता व मानवता खत्म होते देर नहीं लगेगी। इसलिए जीने की शैली को बदलना होगा तथा विवेक को जाग्रत करना होगा। ■■

अमन जैन
छात्र

बदलती शिक्षण शैली

Design by Srishti Singh

आई.आई.टी.कानपुर में सहभागी सतर्कता की उपादेयता (प्रतियोगिता-पुरस्कृत निबन्ध)

सहभागिता को यदि लोकतंत्र के प्राण की संज्ञा दी जाये तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। देश की आजादी के पश्चात् यह देखा गया है कि विभिन्न सरकारी विभागों में अधिकारी और कर्मचारीगण अनेकानेक नियमों का उल्लंघन करते हुए स्वयं को तथा अपने से जुड़े हुए लोगों को फायदा पहुँचा रहे हैं तथा भारतीय विकास को बेतहाशा चोट पहुँचा रहे है। भ्रष्टाचार की इस महामारी पर चोट पहुँचाने हेतु भारत सरकार ने भ्रष्टाचार की रोकथाम हेतु श्री के संथानम की अध्यक्षता में केन्द्रीय सतर्कता आयोग का गठन किया था। यह आयोग स्वतंत्र रूप से विभिन्न सरकारी संगठनों के क्रियाकलापों की जाँच करने हेतु बनाया गया था। सतर्कता आयोग का प्रमुख कार्य विभिन्न सरकारी विभागों तथा उनसे जुड़ी नीतियों के कार्यान्वयन की जाँच करना है, और साथ ही साथ आयोग इस पर कड़ी निगरानी रखता है कि कोई कर्मचारी या अधिकारी जानबूझकर किसी अनुचित माध्यम से विभाग को आबंटित धनराशि का दुरुपयोग न करें। इस आयोग का कार्य न सिर्फ धन के उचित उपयोग की उपादेयता सुनिश्चित करना है वरन् यह भी सुनिश्चित करना है कि कोई भी परियोजना समय से पूरी की जा सके। इसके अतिरिक्त आयोग यह भी सुनिश्चित करता है कि वे कौन से नियम व कानून हैं जिनके तहत कर्मचारी स्वयं को लाभ पहुँचाते हैं तथा आसानी से बच निकलने में सक्षम हो पाते हैं। यह आयोग लोगों की विभिन्न शिकायतों को अत्यन्त गंभीरता से लेता है और उनका तत्काल निवारण करने का प्रयास करता है। इस प्रकार यदि हम देखें तो इस आयोग का मूल उद्देश्य लोगों की सहभागिता पर टिका है, जो लोगों से सतत् यह आह्वान करता है कि सारे सरकारी विभाग एवं उनकी योजनाएं देश की जनता के भले के लिए ही हैं न कि मुट्ठी भर अधिकारियों और कर्मचारियों की संपत्ति हैं।

आईआईटी कानपुर न सिर्फ प्रौद्योगिकी वरन् विज्ञान एवं सामाजिक विज्ञान में भी अग्रणी भूमिका निभाता रहा है। इसलिए इस आयोग की उपयोगिता इस संस्थान के लिए और भी बढ़ जाती है। विभागों में सर्वोत्कृष्ट क्रियान्वयन के लिए अधिकारी, अध्यापक, छात्र, कर्मचारीगण एवं संपूर्ण आईआईटी जनता की सहभागिता आवश्यक है। इस सहभागिता हेतु कुछ निम्नलिखित सुझाव हैं-

1. प्रत्येक विभाग में एक कमेटी का गठन किया जाना चाहिए जिसमें प्रशासन से जुड़े लोगों का प्रतिनिधित्व हो।

2. इस कमेटी को यह स्वतंत्रता दी जानी चाहिए कि विभाग से जुड़े किसी लेन-देन, उसकी क्रियाप्रणाली एवं उसकी उपादेयता की जाँच कभी भी की जा सके एवं प्रत्येक सेमेस्टर में कम से कम एक बार इसकी रिपोर्ट संस्थान के निदेशक को सूचनार्थ प्रेषित की जाये ।

3. इस आयोग के सदस्यों के कार्यों एवं शक्ति में किसी प्रकार का पदानुक्रम नहीं होना चाहिए, ताकि कोई सदस्य किसी अन्य सदस्य पर अपनी शक्ति का प्रभाव न दिखा सके।

4. कमेटी के सदस्यों को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि किसी भी प्रकार के सरकारी अनुदान पर होने वाले विकास में सभी अध्यापकों, छात्रों एवं कर्मचारियों की सहभागिता नियमानुसार हो।

5. कमेटी के सदस्यों को लगातार इस बात की निगरानी करनी चाहिए कि विभाग की लक्षित योजनाओं में समयबद्ध विकास हो रहा है या नहीं और यदि नहीं तो इससे जुड़े लोगों को इसके प्रति आगाह करे।

6. यदि कोई व्यक्ति अपनी कोई शिकायत या नियमों से जुड़ी कोई अनियमितता की जानकारी कमेटी को देता है तो उस व्यक्ति की जानकारी गोपनीय रखनी चाहिए एवं शिकायत की समुचित जाँच करवानी चाहिए। जाँच के बाद उचित कार्यवाही और यदि आवश्यक हो तो दण्ड-व्यवस्था की भी संस्तुति करनी चाहिए। इसके अतिरिक्त जानकारी देने वाले व्यक्ति को पुरस्कार या दण्ड भी सूचना की सार्थकता के आधार पर तय किया जाना चाहिए।

7. प्रत्येक विभाग के पदाधिकारियों को चाहिए कि वे एक तय समय सीमा में अपने कार्यालय में अवश्य आयें ताकि लोग अपनी समस्या का निवारण शीघ्रताशीघ्र करवा सकें।

8. प्रत्येक व्यक्ति और उनसे जुड़े अधिकारों एवं कर्तव्यों की जानकारी वेबसाइट पर डाल देनी चाहिए एवं आयोग से जुड़े क्रियाकलापों को भी इस वेबसाइट पर लगातार अपडेट करते रहना चाहिए।

9. प्रत्येक विभाग के कर्मचारियों को हर हाल में अपने कार्य-समय में कार्यालयों में उपस्थित रहना चाहिए और यदि संभव हो तो समय-समय पर उनके चाय-पान की व्यवस्था विभाग में ही होनी चाहिए।

उपर्युक्त कुछ सुझावों के अतिरिक्त हममें अपनी स्वयं की पारदर्शिता एवं उत्तरदायित्व का बोध होना चाहिए, जो हमें अपने आईआईटीयन होने का भाव प्रदान करता है, तथा हमें देश के लाखों करोड़ों लोगों के आशा एवं विश्वास को कायम रखने का प्रण करवाता है। यदि हम सभी इस प्रण को पूरा करने में सतत् प्रयासरत रहें, तो यह इस संस्थान के सर्वांगीर्ण विकास के रूप में परिलक्षित होगा, जहाँ न कोई अनियमितता और न कोई भ्रष्टाचार होगा, और संस्थान अन्य संस्थानों/ उपक्रमों के बीच आदर्श के रूप में स्थापित होगा। ■■

विजयेन्द्र पाण्डेय
शोध-छात्र

साहित्य-यात्रा

इक धुँधली सी परछाईं

अक्सर कौंध जाती है मन में
इक धुँधली सी परछाई।
कुछ इठलाती, इतराती सी
मुसकाती, सकुचाती सी
सोच नहीं पाता हूँ मैं,
कि कौन है वो?
जो मन की अनन्त गहराइयों में,
इस कदर समायी है।
अपनी होते हुए भी
नितांत परायी है।
खोजता रहता हूँ मन-मंदिर में,
कि शायद कहीं, शायद कभी,
देख सकूँगा वह धवल रूप,
निश्छल सी भावुक वो धूप।
कि जिसके आँचल में आकर,
कुछ सुकूँ मिल सकेगा मुझको।
जिसकी मीनाक्षियों में शायद,
आमोद मिलेगा मुझको।
जिसके स्वर्णिम स्पर्श से,
रोम-कूप बहकेंगे।
जिसकी मोहक उच्छवासों से,
दिग्दिगन्त महकेंगे।
जिसकी रक्तिम आभा से,
मन-पलाश खिलेंगे।
जिसके चंचल उद्वेगों से,
अगणित मोती बिखरेंगे।
पर! अक्सर डर जाता हूँ मैं,
कि कहीं यह दिवा-स्वप्न तो नहीं।
किसी भ्रमित शावक की,
मृग-मरीचिका तो नहीं?
क्या मानस-पटल पर यों ही,
धुँधली रहेगी परछाई?
या कभी अन्तस्तल पर,
साकार बनेगी परछाई? ■■

अंकुश शर्मा
छात्र

निर्दयी नेतृत्व

जबसे हम आजाद हुए, क्या खोया और क्या पाया है।
किसान खेत में भूखा है, मजदूर बहुत अकुलाया है।।

मंहगी हुई दाल और रोटी, दूध-दही के क्या कहने हैं?
सूखा माँ का आँचल भी अब, बच्चे लगे बिलखने हैं
क्या शासन सत्ता वालों ने, दर्द जान ये पाया है?
जबसे हम आजाद हुए.....।।

कैसे ब्याह होय बेटी का, बेटे को कैसे काम मिले?
रीति-रिवाजों की चिन्ता में, गरीब बाप हर समय जले,
सामाजिक ठेकेदारों ने, दर्द समझ कब पाया है?
जबसे हम आजाद हुए.....।।

लूट-लूट भर रहे तिजोरी, क्या नेता क्या अधिकारी,
अनायास ही लुटा रहे हैं, धन सारा ये सरकारी,
खून चूसता है जनता का, जो गद्दी पर लद पाया है,
जबसे हम आजाद हुए.....।।

जाति-धर्म, भाषा और क्षेत्र का, बँटवारा करवाते हैं,
लूटपाट, दंगा-फसाद और मारकाट करवाते हैं,
वोटों के चक्कर में अफजल, को दामाद बनाया है,
जबसे हम आजाद हुए.....।। ■■

बृजेन्द्र श्रीवास्तव 'उत्कर्ष'
स्वस्थ्य केंद्र

अनुपमा

खुशबू सी बिखरती तेरी मुस्कान है, फलक तक
झिलमिलाती है नभ की आभा, तेरे होठों से पलक तक
सौन्दर्य की क्या तारीफ करें, तुम सितारों की झलक हो
अनुपमा हो तुम, तेरी उपमा की अप्सराओं को ललक है।।

रक्त तृप्त तेरे ओष्ठों से प्रतिबिंबित रश्मि से जीवन का प्रभात है
तेरे प्रकाश में ही केवल, मेरा जीवन प्रारंभ और समाप्त है
कल्पना में तुम हो और सच्चाई में, तेरा रूप हर जगह है
भूल कैसे सकता तुम्हें, जब सब तेरे रंग में ही रंगा है।।

नदी के बहते जल सा मचलता हुआ तेरा मन है
जैसे धूप में चमकता निर्मल सुन्दर श्वेत वसन है
मासूमियत तेरे हर एक अंग में समायी है
अनुपमा हो तुम, तुम जैसी रब ने एक ही बनायी है।।

नेत्र में स्पष्ट दिखती, हृदय की सरलता है
तेरे कहे हर शब्द में मकरंद सी मधुरता है
तेरी एक पुकार में बर्फ क्या पत्थर भी पिघलता है
अनुपमा हो तुम पूर्णता तुम्हारी ही संकल्पना है।। ■■

अभिषेक कुमार गुप्ता
छात्र

वर्तमान भारत

आज का भारत यद्यपि विकासशील देशों की सूची में आता है लेकिन भारत का अंदरूनी ढ़ाँचा पूरी तरह से चरमराया हुआ है। आजादी के 60 साल बाद भी अगर आप अपने घरों से बाहर निकल कर देखें तो पायेंगे कि अनेक गरीब लोग सड़कों के किनारे बिना घर-बार के रहते हैं और ठंड में भी ठिठुरते रहते हैं।

गरीबी में जो हैं जकड़े
तन पर भी नहीं है उनके कपड़े
है नहीं रहने के लिए जिनके पास घर,
खाना नहीं खाते वो पेट भर,
मिल नहीं पाती उन्हें रोटी,
फिर भी भ्रष्टाचारी नेताओं की
हो रही जेब अच्छे से मोटी।

सीमित शब्दों में कहा जाये तो आज भी भारत की जनसंख्या के एक बहुत बड़े हिस्से को जिन्दगी की आम जरूरतें अर्थात् रोटी, कपड़ा और मकान उपलब्ध नहीं हो पाता। दूसरी तरफ हमारे नेताओं की जेबें प्रतिदिन मोटी होती जा रही हैं। हम सिर्फ अखबारों में छपी उन खबरों को देखकर खुश होते रहते हैं जिनमें भारत के अनिल अंबानी बंधु जैसे चुनिंदा अमीरों को दुनिया के सबसे ज्यादा अमीर लोगों की सूची में दिखाया जाता है। उन खबरों को पढ़कर हम धरातल पर नहीं रहते और काल्पनिक दुनिया में जीने लगते हैं। भारत में जो ये बड़े-बड़े अमीर हैं ये जनसंख्या का एक बहुत ही छोटा भाग है। हमें वास्तविकता में आना होगा और भारत की गरीबी और वर्तमान स्थिति के कारणों पर ध्यान देना होगा।

गरीबी और भारत की वर्तमान स्थिति के कारणों पर गौर किया जाये तो उनमें हम मुख्यतया अशिक्षा जनसंख्या, भ्रष्टाचार पाते हैं। हमें भारत को विकसित बनाने के लिए अपने इन सभी समस्याओं को दूर करना होगा।

सर्वप्रथम भ्रष्टाचार पर गौर करते हैं। वर्तमान समय में देश की अधिकतम जनता भ्रष्ट है। सबके सब अपना काम निकालने के लिए सही तरीकों को न चुनकर गलत तरीकों को चुनते हैं। कुछ कलमाड़ी जैसे पकड़े जाते और कुछ देश का पैसे लूटकर बच निकलते हैं। हमें भ्रष्टाचार को खत्म करने के लिए सख्त से सख्त कदम उठाने होंगे तभी हमारे देश का उद्धार हो सकता है। सरकार को भ्रष्टाचार के खिलाफ कठोर कानून बनाने होंगे साथ-ही-साथ उनको अमल में लाना होगा। हम तो कानून बनाकर भूल जाते हैं और जुर्म करने वाले सिर उठाकर घूमते रहते हैं। देश के उद्धार के लिए सभी बुद्धिजीवियों को मिलकर काम करना होगा और देश के हरेक व्यक्ति में देश के प्रति उसकी जिम्मेदारी की भावना को जगाना होगा।अन्य जो मुख्य कारण है वह हैं अशिक्षा। आज भी भारतीय समाज का बहुत बड़ा हिस्सा अशिक्षित है। मध्यम वर्ग और उच्च वर्ग के युवाओं को छोड़कर निचले तबके के युवाओं तक तो शिक्षा पहुँच ही नहीं पाती। आज भी भारत के गाँवों में स्कूल खाली पड़े रहते हैं जिससे भारत सरकार के सर्व शिक्षा अभियान और सब पढ़ें, सब बढ़ें जैसे कदम असफल होते प्रतीत होते हैं। वर्तमान समय में गाँव के स्कूलों में बच्चे सिर्फ मिड-डे मील खानेऔर छात्रवृत्ति लेने जाते हैं। शिक्षा का स्तर सुधारने के लिए हमको गरीब लोगों तक ये संदेश पहुँचाना चाहिए कि अगर आप अपने लड़के बच्चों को पढ़ाओगे नहीं तो वह भी आपकी तरह ही गरीब रह जाएंगे और पूरी जिन्दगी आपको धिक्कारते रहेंगे। शिक्षकों के द्वारा बच्चों को ऐसे व्यक्तियों की कहानियाँ सुनायी जानी चाहिए जिन्होने पढ़ाई के बलबूते पर गरीबी को बहुत पीछे छोड़ दिया।

तीसरा अर्थात् मुख्य कारण जो एक तरह से सभी कारणों का जन्मदाता है वह है जनसंख्या वृद्धि। आज हमारी जनसंख्या दुनिया में चीन के बाद सबसे ज्यादा है, चीन ने तो अपनी जनसंख्या वृद्धि पर काबू पा लिया है। पर हम अभी तक जनसंख्या वृद्धि की दर को कम करने पाने में सफल नहीं हो पाए हैं। अगर यही हाल रहा तो 2020 तक हमारी जनसंख्या सबसे ज्यादा होगी। अधिक जनसंख्या के अनेक नुकसान है। इसके कारण खेती योग्य भूमि का प्रतिशत कम हो रहा है, क्योंकि लोग खेती योग्य भूमि को अपने रहने के लिए प्रयोग कर रहे हैं। परिणामस्वरूप खाने की चीज़ें महँगी होती जा रही हैं। बढ़ती जनसंख्या, अशिक्षा को भी बढ़ावा देती है। क्योंकि अधिक लोगों तक सरकार के द्वारा शिक्षा को पहुँचाना असंभव है। अधिक जनसंख्या की वजह से चारों तरफ बेरोजगारी व्याप्त है। बढ़ती बेरोजगारी से आज के युवा गलत रास्तों पर जा रहे हैं। अतः हमें जनसंख्या वृद्धि की दर को रोक कर अपने मानव संसाधन को संयोजित तरीके से प्रयोग करना होगा ताकि हमारी विकासदर बढ़ सके बढ़ती जनसंख्या को रोकने के लिए सरकार के द्वारा लोगों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। कम से कम बच्चों वाले परिवारों को सम्मानित किया जाना चाहिए। और लोगों को बताना चाहिए की लड़का-लड़की एक समान है क्योंकि कुछ लोग लड़के की चाह में कई-कई संताने पैदा करते जाते हैं। लोगों को अधिक बच्चे होने के नुकसान बताने चाहिए।और अंत में वर्तमान युवाओं को देश की समस्याओं को समझकर उनको दूर करने के लिए आगे आना चाहिए ताकि भारत गरीबी, अशिक्षा, भ्रष्टाचार इत्यादि समस्याओं से निकलकर चहुँमुखी विकास कर सकें। ■

साहित्य-यात्रा

कानपुर शहर- महिलायें, आईआईटी कानपुर

जैसा हम सभी को विदित है कि कामकाजी महिलाएं कानपुर शहर से आईआईटी आती हैं। उसी प्रकार महिलाएं आईआईटी से शहर काम करने जाती हैं।

कानपुर शहर की अपनी एक तहजीब है और उसी में समाहित है आईआईटी कानपुर की एक अलग पहचान। आईआईटी कानपुर किसी न किसी रूप में इन सभी महिलाओं को, अपने आधुनिक सुरुचिपूर्ण ढाँचे के चलते, आगे बढ़ने के अवसर प्रदान कर रहा है। इसी संदर्भ में मैंने महिला-दिवस के उपलक्ष्य में यह कविता लिखी है। यह कविता समर्पित है उन सभी कामकाजी महिलाओं को जो अनेकानेक कष्ट सहकर भी घर एवं ऑफिस के कार्यों में संतुलन बनाए रखती हैं।

मैं आईआईटी-कानपुर की एल्युम्नस
कभी नहीं सीखा, मुश्किलों में रोना,
क्योंकि आईआईटी कानपुर के प्रांगण में, बरसता है कर्म कौशल का सोना।
इसका हरा-भरा कैम्पस
सौहार्द से भरपूर है। जीवनदायिनी है।
इको फ्रैन्डली है,... महिला फ्रैन्डली है।
इसकी मिट्टी में महिला सशक्तिकरण की खुशबू है।
मेरी आँखों के आगे शहर एवं आईआईटी कानपुर का मिश्रण लहराता है।

एक ओर अनूठा कानपुर, आधुनिक शहरीकरण की ओर बढ़ने का प्रयास कर रहा है।
दूसरी ओर आईआईटी कानपुर प्रौद्योगिकी की अद्भुत मिसालें प्रस्तुत कर रहा है।

शहर का उल्लास, एवं आईआईटी की उमंग
दोनों मिलकर, मेरे जीवन में, विजय उल्लास भरते हैं,
आईआईटी कानपुर की महिला प्रतिभाएं, भरोसा दिलाती हैं,
कि जीवन की हार-जीत, एक बादल की आँख मिचौनी है,
जो पल में तोला है, पल में माशा है,
पर असल में,
सच्चा-सरल नियंत्रित जीवन ही खरा सोना है।

इस मिश्रण की छोटी-छोटी खुशियाँ,
मेरे जीवन की, हार्ड-डिस्क पर सैकड़ों ग्राफ खींचती हैं,
महिला दिवस के, शुभ अवसर पर मेरे पास
शहर का विश्वास है, आईआईटी कानपुर का अटूट वैज्ञानिक प्रेम है,
दोनों का समन्वय, मेरे सरल जीवन की आशा है।। ■■

डॉ सुकर्मा थरेजा
एल्युम्नस आईआईटी कानपुर

अगर फ़ुरसत मिले पानी की तहरीरों को पढ़ लेना
हर इक दरिया हज़ारों साल का अफ़साना कहता है।

तुम्हारे शहर के सारे दीये तो सो गए कब के
हवा से पूछना दहलीज़ पे ये कौन जलता है।

सभी चार दिन की हैं ये चाँदनी, ये इमारतें, ये विज़ारतें
मुझे उस फ़क़ीर की शान दे कि ज़माना जिसका मिसाल दे।

मेरी सुबह तेरे सलाम से मेरी शाम है तेरे नाम से
तेरे दर को छोड़ के जाऊँगा, ये ख़्याल दिल से निकाल दे।

कोई हाथ भी न मिलायेगा, जो गले मिलोगे तपाक से,
ये नये मिज़ाज का शहर है, ज़रा फ़ासले से मिला करो। ■■

स–आभार
जनाब वशीर बद्र

पैसा

एक किसान का बेटा था, उसने बीजों को उगते देखा था,
सदा रहा अभावों में वह अबोध बालक था।
उसने कुछ सिक्कों को धरती में बोया था;
रोज सींचता, रोज देखता पर एक न अंकुर फूटा था।
नित्य सोचता पेड़ उगेगा उस पर पैसों की डालें होंगी;
माँ के खाली हाथों में तब पैसों की कमी न होगी।
हो हताश वह सोच रहा था, धरती माँ को कोस रहा था;
पता नहीं क्यों अब तक मेरा पैसा नहीं उगा है?
उसने अपनी माँ से पूछा-
माँ मैंने धरती में कब से पैसों को बोया है;
पर उसमें अब तक एक न अंकुर फूटा है।
उसकी बाल सुलभ मति को माँ ने सुलझाया;
पैसे वृक्ष नहीं बन सकते, माँ ने उसको समझाया।
बीज सजीव होते हैं, वह वृक्षों से आते हैं
अपना अस्तित्व मिटाकर वे फिर वृक्ष बन जाते हैं।
पैसे बने धातु के होते न इनमें जीवन है,
तू अबोध है तूने सोचा पैसों में जीवन है।
लालच को रोपा था तूने तृष्णा को सींचा था,
इसीलिए उसमें अब तक एक न अंकुर फूटा था।
पैसों के पेड़ नहीं होते, न पैसे पेड़ पे उगते हैं,
ये तो बेटा! जीवन में मेहनत करने से होते है।
बड़ा हुआ तब उसको माँ की बात समझ में आई;
मेहनत करके जीवन में पैसों की फसल उगाई।
पिता फसल दिल से बोते थे, उसने दिमाग से बोई थी
पैसों की फसल उगाने में अपनी सेहत भी खोई थी
धन उगा करता खेतों में सबको बाँटा जाता है
पर धन के अंबारों को वह स्वयं बाँट न पाता है।
उस समय हताश हुआ जब बीमारी ने घेरा;
लगता जीवन का अंत हुआ अब चारो ओर अँधेरा।
माँ की बात समझ तब आई, पैसे में नहीं जीवन होता,
यदि पैसे में जीवन होता तो मैं भी आज अमर होता। ■

श्रीमती पूजा मिश्रा

रूठ गई गंगा की धारा

गंगा नहीं मात्र जल की धारा है
ये तो भारत की जीवन धारा है
गंगा भगीरथ के तप का फल हो सकती है
ये शंकर के केशों से निकला जल हो सकती है
ये भारत माता की साड़ी का आंचल हो सकती है
पर गंगा नहीं मात्र एक पौराणिक परिभाषा है।
भौगोलिक संदर्भों में हो, या सामाजिक संदर्भों में
इतिहास साक्षी है, इस सरिता ने क्या कुछ नहीं दिया देश को
पीढ़ी दर पीढ़ी पाला पोसा है, हमें हमारे परिवेश को
गंगा ने दिये हमें हमारे शहर, हमारी संस्कृति,
हमारी जलवायु और हमारी समृद्धि
पर हमने क्या दिया प्रतिफल, अपनी माँ को उसके उपकारों का
करते रहे विश्वासघात, अपनी जल जननी के आभारों का
गंगा ने दी हमको नहरें, हमने डाले उसमें नाले
सींचे खेत हमारे गंगा ने, हमने उद्योगो के कचरे भी उसमें डाले
फूंकी जान हमारे बीमारों में गंगा जल दो बूंदों ने
हमने फूंके और बहाए अपने मुर्दे, गंगा के निर्मल जल में
रूठ गयी, सूख गयी और भटक गयी जब सरिता की धारा
हमनें फौरन बाँध बनाये उसको फिर से घर पर लाने को
भूल गये हम जब माँ की आँखों के आँसू मर जाते हैं
बेटों की अत्याचारों से
बहुत कठिन हो जाता है, माँ का फिर से बेटों के घर वापस आना
इसके पहले कि बहुत देर हो जाये, अपनी माँ को खोये हुए
हम चेत जायें तो बेहतर होगा
करें प्रयास अपनी माँ को फिर से पाने को
ये अत्यावश्यक है अपना अस्तित्व बचाने को
यदि हमको अपनी समृद्धि बचाना है
यदि हमको अपनी जलवायु बचाना है
यदि हमको अपना अस्तित्व बचाना है
हमको गंगा माँ की खोयी निर्मलता उसको लौटानी होगी
अविरल बहती रहे गंगा जल की निर्मल धारा
ऐसा आचरण और सदबुद्धि हमें जगानी होगी। ■

डॉ ओ पी मिश्रा

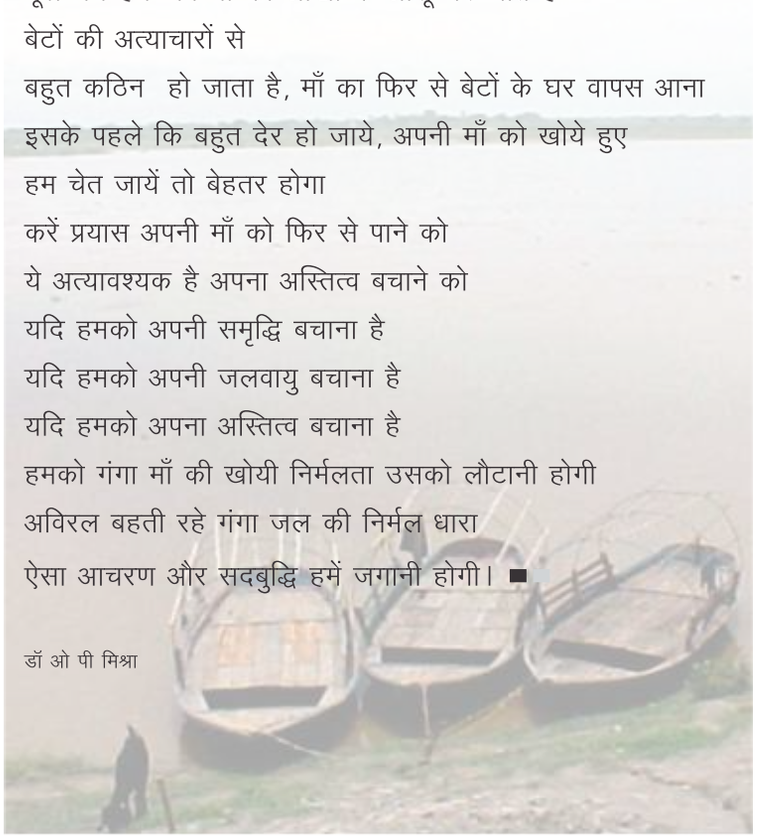

साहित्य-यात्रा

बदलते जमाने के साथ बदलती शिक्षा

आधुनिक युग में नई तकनीकों के प्रचलन का सर्वाधिक प्रभाव जीवन के जिन-जिन क्षेत्रों पर पड़ा है, उनमें हमारी शिक्षा-पद्दति एवं शिक्षण-शैली सर्वोपरि है। पुरानी गुरुकुल शिक्षा के दौर से लेकर आज की स्मार्ट क्लास वाली शिक्षा के दौर तक हमारे समाज पर विज्ञान एवं उसकी चमत्कारिक तकनीकों का गहरा असर हुआ है। परिणामस्वरूप पढ़ने वाले, पढ़ाने वाले, पढ़ाने के तरीके सभी में बदलाव आया है। किन्तु बड़ा प्रश्न यह उठता है कि क्या इन सबसे वास्तव में शिक्षा का विकास हुआ है या शिक्षा मात्र दिखावे एवं भौतिकता के अनावश्यक आवरणों में लिपट कर कैद होकर रह गई है।

प्राचीनकाल की शिक्षण-पद्दति पर गौर करें तो हम पाते हैं कि शिक्षा पूर्णतः गुरू एवं शिष्यों के आपसी संबंधों के माध्यम से हस्तान्तरित होती थी। गुरु शिष्यों के साथ अपने बच्चों के समान व्यवहार करते थे। गुरु शिष्यों में किसी प्रकार का कोई भेदभाव नहीं करते थे। सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि शिष्य अपने घरों से दूर रहकर भी देखरेख और निगरानी में रहते थे। इसका सीधा असर उनके व्यवहार और आचरण पर स्पष्ट दिखाई पड़ता था। शिष्यों के गलत मार्ग पर जाने की संभावना लगभग नगण्य थी।

आधुनिक युग में बच्चे हर वक्त अपने अध्यापकों की निगरानी में नहीं होते हैं। वे या तो अपने परिवारजनों के साथ रहकर विद्यालय जाकर पढ़ते हैं या फिर अकेले छात्रावास में रहकर शिक्षा ग्रहण करते हैं। अकेले रहने वाले छात्रों में, समान उम्र वाले विद्यार्थियों के अधिक संपर्क में आने एवं सामाजिक बंधनों से दूर होने के कारण, कुमार्ग पर अग्रसर होने की संभावनाएं अधिक हो जाती हैं। इसके अतिरिक्त अभिभावकों के लिए भी अपनी रोजमर्रा की व्यस्त जिंदगी से समय निकाल पाना बहुत मुश्किल होता है। ऐसे में दिन प्रतिदिन बच्चों में गलत काम करने की घटनाएँ सुनाई देना स्वाभाविक है।

आज के युग में अधिकांश सभी अध्यापक मात्र जीविकोपार्जन के लिये पढ़ाते हैं। उनमें छात्रों के व्यक्तित्व-विकास का मुख्य ध्येय नहीं होता। उनका एकमात्र उद्देश्य अपना पाठ्यक्रम निर्धारित समय में समाप्त करना होता है। इन सबके अतिरिक्त कई शिक्षक अपनी पढ़ाने की जिम्मेदारियों से भी बचते हैं।

इसके सामान्य उदाहरण हैं-अपनी जगह पढ़ाने एवं सवाल हल करने के लिये किसी छात्र को भेजकर निजी कामों में जुट जाना, कक्षा में सीमित तौर पर पढ़ाकर ट्यूशन को बढ़ावा देना, छात्रों में आपस में भेदभाव करना इत्यादि।

इन सभी खामियों के लिये विद्यालय प्रशासन सर्वाधिक जिम्मेदार हैं। इन्होंने दिखावटी प्रचार की पट्टी आँखों पर पहनाकर अभिभावकों एवं छात्रों के साथ धोखा करने का कोई तरीका नहीं छोड़ा। विद्यालय प्रशासन द्वारा मात्र दिखावे के लिए अध्यापकों को तकनीकों का इस्तेमाल करने पर मजबूर किया जाता है। जबकि सच्चाई यह है कि इससे बच्चों को फायदा कम, समय की बर्बादी अधिक होती है। अधिकांश अध्यापकों को तो इन सब तकनीकों का ज्ञान नहीं होता। अभिभावकों को भी इस बात के लिए जिम्मेदार ठहराना सर्वोचित है कि वे भी इन्हीं सब दिखावों एवं चकाचौंध के पीछे भागकर, अच्छी शिक्षा को दरकिनार कर, अपने बच्चों का दाखिला इन्हीं सब विद्यालयों में करवाते हैं।

अंत में यही निष्कर्ष निकाला जाएगा कि यद्यपि बदले युग में शिक्षा का विकास हुआ है लेकिन बार-बार होनेवाली बाल-अपराध, आत्महत्या की घटनाएं हमें यह सोचने पर मजबूर कर देती हैं कि क्या छात्रों को सचमुच एक अच्छी शिक्षा का माहौल प्राप्त हो पा रहा है? ऐसे में सारी जिम्मेदारी अभिभावकों की बनती है कि वे परवरिश और अपने संस्कारों के कवच से अपने बच्चों को इन सभी बुराइयों से बचाएँ। साथ ही वे अपने बच्चों को इतना जागरूक बनाएँ कि वे अपना भला-बुरा समझकर खामियों के दलदल में से भी बचकर अपने सुनहरे भविष्य का रास्ता तय कर सकें। सरकार एवं समाज के प्रबुद्ध जन इस मामले में अभिभावकों एवं अध्यापकों को जागरूक करें तथा शैक्षणिक ढ़ोंगों एवं आडम्बरों का सख्त बहिष्कार करें क्योंकि अच्छी शिक्षा से ही एक अच्छे समाज का निर्माण होता है और हमारे समाज का सुधार हमारी जिम्मेदारी है।

सिद्धार्थ कोस्टी
छात्र

आपकी याद

जब मैं हुई निराश
मैंने पाया आपको पास
दूर माना आपको यही थी मेरी भूल
कण-कण में बसेरा आपका है
शायद गई थी भूल
आप तो हर पल मेरे साथ ही हैं
जिस क्षण आये याद
दुख-दर्द गए सब भूल
प्रेम भरी आपकी दृष्टि
करने लगी जब याद
आपके चरणों में ही
पाया है स्वयं को।

सृष्टि सिंह
छात्रा

मधुशाला - कल्पना और भावना का सहज रूप

बच्चन की कविताओं पर प्रकाश डालने अथवा उनके काव्य-संसार का विश्लेषण करने से पूर्व आवश्यक है कि स्वयं के सृजन के विषय में उन्होंने जो कुछ कहा है, उस पर भी थोड़ा विचार कर लिया जाय; क्योंकि कवि की सोच के ही अनुरूप उसका सृजन आकार ग्रहण करता है। वे कहते हैं- "अगर मैं दुनिया में किसी पुरस्कार का तलबगार होता तो मैं अपने आपको और अच्छी तरह सजाता, बजाता और अधिक ध्यान से रँग-चुँग कर उसके सामने पेश करता, मैं चाहता हूँ कि लोग मुझे मेरे सरल, स्वाभाविक और साधारण स्वरूप में देख सकें- सहज निष्प्रयास प्रस्तुत क्योंकि मुझे अपना ही तो चित्रण करना है। मैं अपने गुण-दोष जग-जीवन के सम्मुख रखने जा रहा हूँ, पर ऐसी स्वाभाविक शैली में जो लोक-शील से मर्यादित हो। यदि मेरा जन्म उन जातियों में हुआ होता जो आज भी प्राकृतिक नियमों की मूलभूत स्वच्छंदता का सुखद उपयोग करती हैं तो मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं बड़े आनन्द से अपने-आपको आपाद मस्तक एकदम नग्न उपस्थित कर देता।"

'मधुशाला' (सन् 1933-35) बच्चन की सर्वाधिक चर्चित कृतियों में से एक है। सच तो है कि यही वह रचना है जिसने बच्चन को कवि के रूप में स्थापित किया। कल्पना और भावना का जो सहज रूप इस संग्रह में दिखाई देता है वही कवि की सबसे बड़ी शक्ति है। इस संग्रह का मूल स्वर मस्ती का है। मधुशाला का कवि एक मधुर संसार का निर्माण करना चाहता है परन्तु रुढ़िवादी समाज के द्वारा उसकी जीवनगत लालसाएँ कुचल दी जाती हैं, लेकिन जीवन एवं जगत का नया रूप रचने को उत्सुक कवि जीवन एवं जगत में संघर्षों से भरे पथ पर आगे बढ़ता ही जाता है। मधुशाला के संबंध में उसके खुद के संबोधन को देखना आवश्यक है- "आज मदिरा लाया हूँ-मदिरा, जिसे पीकर भविष्यत् के भय भाग जाते हैं और भूतकाल के दारुण दुख दूर हो जाते हैं, जिसे पान कर मान-अपमानों का ध्यान नहीं रह जाता और गौरव का गर्व लुप्त हो जाता है, जिसे ढालकर मानव अपने जीवन की व्यथा, पीड़ा और कठिनता को कुछ नहीं समझता और जिसे चखकर मनुष्य श्रम, संकट संताप सभी को भूल जाता है। आह, जीवन की मदिरा जो हमें विवश होकर पीनी पड़ी है, कितनी कड़वी है! कितनी! यह मदिरा उस मदिरा के नशे को उतार देगी, जीवन की दुखदायिनी चेतना को विस्मृति के गर्त में गिरायेगी तथा प्रबल दैव, दुर्दमकाल, निर्मम कर्म और निर्दय नियति को क्रूर, कठोर, कुटिल आघातों से रक्षा करेगी, क्षीण, क्षुद्र, क्षण-भंगुर, दुर्बल मानव के पास जग-जीवन की समस्त आधि-व्याधियों की यही एक महौषधि है। मेरा हृदय कहता है कि आज इसकी तुझे आवश्यकता है। ले, इसे पान कर, और इस मद के उन्माद में अपने को, अपने दुख को, अपने दुखद समय को और समय के कठिन चक्र को भूल जा। ले इसे पी, और इस मधु से अपना जीवन नवोल्लास, नूतन स्फूर्ति और नवल उमंगों से भर। उफ, किसे ज्ञात है कि यह दूसरों को मदोन्मत्त कर देने वाला स्वयं कितने अवसादों का पुंज है। किसे मालूम है कि दूसरों को शीतलता प्रदान करने वाला स्वयं कितनी भीषण ज्वाला में दग्ध हुआ करता है।"

इस संबोधन में कवि की आन्तरिक घुटन, स्वच्छन्दता हेतु छटपटाहट एवं आंतरिक पीड़ा का भाव तथा क्षणिक सुखोपभोग की तीव्र लालसा व्यक्त हुई है, साथ ही वह परम्परागत रूढ़ियों एवं आचार-विचारों के प्रति विद्रोह का भाव भी व्यक्त करता है। 'मधुशाला' की मूलशक्ति यही है कि इसमें झूठी परम्पराओं, पाखंडो, थोथे आदर्शों एवं खोखली नैतिकताओं के प्रति उपेक्षा भाव है -

दुतकारा मस्जिद ने मुझको कहकर है पीनेवाला,
ठुकराया ठाकुरद्वारे ने देख हथेली पर प्याला,
कहाँ ठिकाना मिलता जग में भला अभागे काफिर को?
शरणस्थल बनकर न मुझे यदि अपना लेती मधुशाला।

मधुशाला में कवि की व्यक्तिवादी जीवन-दृष्टि मुखर हुई है। जीये हुए यथार्थ के प्रति असंतोष का भाव प्रकट हुआ है। तभी तो वह कहता है -

याद न आये दुखमय जीवन इससे पी लेता हाला,
जग चिन्ताओं से रहने को मुक्त, उठा लेता प्याला,
शौक साध के और स्वाद के हेतु पिया जग करता है,
पर मैं वह रोगी हूँ जिसकी एक दवा है मधुशाला।

लेकिन व्यक्तिवादी दृष्टि के साथ ही साथ उसमें साहित्यिक, दार्शनिक, राष्ट्रीय एवं सामाजिक दृष्टिकोण भी प्रतिफलित हुआ है। बच्चन ने मधुशाला के माध्यम से जनमानस के हृदय में बलिदान, त्याग एवं समर्पण की प्रेरणा भरी है। अपनी प्रतीकात्मकता में मधुशाला की कविताएँ गहरे अर्थों को वहन करने वाली है। कवि की ये पंक्तियाँ यहाँ उल्लेखनीय हैं जहाँ भारतमाता और स्वतंत्रता के पक्ष को सामने रखा गया है -

धीर सुतों के हृदय-रक्त की आज बना रक्तिम हाला,
वीर सुतों के वर शीशों का हाथों में लेकर प्याला,
अति उदार दानी साकी है आज बनी भारतमाता,
स्वतंत्रता है तृषित कालिका, बलदेवी है मधुशाला।

इस प्रकार मधुशाला की रूबाइयाँ अपनी प्रतीकात्मकता में विद्रोह के भाव को समाहित किये हुए हैं यहाँ कवि ने जीवन एवं जगत के बीच फैली विषमता, ईर्ष्या, द्वेष आदि को प्रश्रय देने वाली प्रवृत्तियों को नष्ट कर देने की भाषा को ओजस्वी वाणी दी है। इस प्रकार कवि का दृष्टिकोण यहाँ मानवतावादी है यह बात अवश्य है कि उसमें कल्पना और भावना का व्यापक समावेश है। ■■

डॉ वेदप्रकाश सिंह
सहायक कुलसचिव

अनुचिंतन

एंटीगोनी-त्रासदी के जीवंत चित्रण का काव्यरूपक (शोधपरक लेख)

साठोत्तरी हिंदी नाटकों की श्रृंखला में भवानीप्रसाद मिश्र कृत गीतिनाट्य (काव्यनाटक) एंटीगोनी एक महत्वपूर्ण कड़ी है। कवितामयी रूपक के द्वारा इस कृति में यह बताया गया है कि 25 जून 1975 से 21 मार्च 1977 तक आपातकाल का समय भारत के आधुनिक इतिहास का एक काला अध्याय है। इस अवधि में किए गए अत्याचारों के लिए उत्तरदायी व्यक्तित्व की आत्मघाती प्रवृत्ति को भवानीप्रसाद मिश्र ने क्रीयों के चरित्र में देखा है।

एंटीगोनी मूलतःएक यूनानी नाटक है, जो सोफोक्लीज़ (496-406 ई.पू.) द्वारा 441 ई.पू.में लिखा गया था। एचीलीज़ और यूरिपिडीज़ जैसे अपने समकालीन नाटककारों जैसी अलंकारपूर्ण भाषा न होने के बावजूद भी भाषा की बेबाकी के साथ सिद्धांत तथा दर्शन को परोक्ष रूप से रखने के कारण सोफ़ोक्लीज़ ने अपने नाटकों को जीवंत बनाया था, जिससे वे आज भी प्रासंगिक बने हुए हैं। यही कारण है कि भवानी प्रसाद मिश्र द्वारा एंटीगोनी के माइकेल टाउनसैंड के अंग्रेजी-रुपांतर का 1977 ई. हिंदी में अनुवाद करके प्रकाशित करवाया गया था। पुस्तक रूप में आने से पूर्व आपातकाल के ही दौरान भवानीप्रसाद मिश्र का गीतिनाट्य एंटीगोनी मासिक पत्रिका **गाँधीमार्ग** के तीन अंकों में छापा गया था। लोग इसके मंचन के लिए भी तत्पर थे , किन्तु किस्सा कुर्सी का फिल्म जला दिये जाने से वे भयाक्रांत हो गए थे।

वस्तुतः एंटीगोनी का हिंदी अनुवाद भले ही किया गया हो, किंतु उसके मूल में कोई परिवर्तन नहीं किया गया है। फिर भी वह एकदम आज की कृति महसूस होती है। इस संबंध में भवानी प्रसाद मिश्र का एक वक्तव्य उल्लेखनीय है-'**एंटीगोनी** के अंग्रेजी में एकाधिक अनुवाद हैं; मगर उन सारे अनुवादों से यह अनुवाद मूल में बिना कोई बदलाव किये भी एकदम आज की कृति इसीलिए लगता है कि परिस्थिति मेरे सामने इतिहास नहीं थी, वर्तमान थी और यक्ष-प्रश्न थी और वातावरण जानना चाहता था कि जवाब कहाँ से कैसा आएगा। इस नाटक में वह सब था और इसलिए अनुवाद में आ गया। कालातीत कृतियाँ इसी तरह कालातीत रखी जा सकती हैं-जैसे **गीता**। हर बदलते ज़माने में उसके अलग-अलग अनुवाद हुए और उन्होंने अलग-अलग प्रतिबिंब उभारे।'

भवानीप्रसाद मिश्र द्वारा **एंटीगोनी** को समर्पित करते हुए लिखी गई यह इबारत सबसे पहले ध्यान आकृष्ट करती है-'समर्पित उनको जो अत्याचार के विरोध में खड़े होते हैं। ' यह महत्वपूर्ण है कि गीतिनाट्यों में अत्याचार का प्रतिकार मुख्य उद्देश्य के रूप में दिखाई देता है। गीतिनाट्यों को रूपक अथवा काव्यनाटक भी कहा जाता है और इनकी एक लंबी परंपरा प्राचीन सभ्यताओं के समय से ही मिलती है ; संस्कृत, यूनानी, लैटिन आदि के नाटक इसके जीवंत साक्षी हैं ; यह बात अलग है कि इनमें आद्यंत मात्र कविता न होकर पद्य का बाहुल्य है। इस संबंध में डॉ रामकिशोर शर्मा का कहना है कि 'काव्येषु नाटकं रम्यं कथन से स्पष्ट है कि नाटक को काव्य का ही अभिन्न अंग माना जाता रहा है।'3 डॉ मोहन अवस्थी का मानना है कि 'नाटक गेय होने से गीतिनाट्य कहलाते हैं। गीतिनाट्य भावप्रधान लयात्मक रचना है।'4 गीतिनाट्य की परंपरा आधुनिककाल में और अधिक परिष्कृत हुई है। जयशंकर प्रसाद के करुणालय से, आधुनिककाल में इस परंपरा का आरंभ माना जाता है। अनघ (मैथिलीशरण गुप्त); उनमुक्त (सियारामशरण गुप्त); स्वर्णविहान (हरिकृष्ण प्रेमी); कालिदास, विश्वामित्र, मत्स्यगंधा, राधा, अशोकवन-वंदिनी, संत तुलसीदास, गुरु द्रोण का अंतर्निरीक्षण, अश्वथामा (उदयशंकर भट्ट); रजतशिखर, फूलों का देश, उत्तरशती, शुभ्रपुरुष, विद्युत-वसना, शरत-चेतना, ध्वंसशेष, अप्सरा, ज्योत्सना, शिल्पी, सौवर्ण (सुमित्रनंदन पंत); कल्पांतर, दंगा, राम, इंदुमती (गिरिजाकुमार माथुर); मदनिका (आरसीप्रसाद सिंह); मगध-महिमा, उर्वशी (रामधारी सिंह 'दिनकर'); अंधायुग, कनुप्रिया, नीली झील (धर्मवीर भारती); उत्तर प्रियदर्शी (सच्चिदानंद हीरानंद वात्सायन 'अज्ञेय'); एक कंठ विषपायी (दुष्यंतकुमार) आदि महत्वपूर्ण गीतिनाट्य हैं। इन सबके अनुशीलन से स्पष्टतः देखा जा सकता है कि गीतिनाट्यों में बाहरी संघर्ष के स्थान पर मानसिक द्वंद पर बल दिया जाता है, जिससे भावनाएँ-संवेदनाएँ प्रमुखतः रूपकार धरकर आती हैं।

एंटीगोनी में एक के बाद एक त्रासद घटनाएँ कुछ उसी प्रकार घटती हैं, जैसे कि शेक्सपीयर के नाटकों में विशेष रूप से एंटीगोनी के मात्र चार दृश्यों में ही पूरी गंभीरता और सारगर्भिता के साथ महाकाव्यात्मक कथानक को व्यापक आयाम देने में सफलता मिली है। ऑडीपस की एंटीगोनी और इस्मेने नामक पुत्रियाँ अपने मामा क्रीयों के क्रोध व अत्याचार का कम-ज्यादा शिकार होते हैं। त्रासदी के सिलसिले का अंदाजा पहले दृश्य के इस्मेने के संवाद के एक अंश से ही लग जाता है-

एंटीगोनी! तुम्हें सुनाऊँ फिर वह सारा
जो कुछ अपने साथ हुआ है।
पिता हमारे मरे बेचारे
घृणा और धिक्कार ओढ़कर
उन्हें खोजना पड़ा छोड़कर शर्म स्वयं
अपने पापों को
अपनी आँखें आप फोड़नी पड़ी।
जुकास्टा जो माँ भी थी
पत्नी भी थी ऑडीपस की
अपने हाथों फाँसी के फंदे पर लटकी।
इसके बाद हमारे दोनों प्यारे भाई
एक-दूसरे के हत्यारे बने।

यह तो त्रासदी की शुरुआत है। थीबीज़ नामक यूनानी नगर में ही सारी घटनाएँ घटती हैं, इसलिए रंगमंच और अभिनेयता की दृष्टि से यह रूपक (एकांकी) बहुत उपयुक्त है। यूनानी देवी-देवताओं के माध्यम से इस काव्यरूपक में मानवीय दृष्टि की स्थापना होती है। मिथकों और पौराणिक प्रतीकों के प्रयोग दर्शन की अनेक बातें कह जाते हैं-

फूँक-फूँककर कदम आदमी अगर न रक्खे
नीति न पाले, न्याय न बरते
तो ऐसा दुर्भाग्य विवश आगे आता है
कभी-कभी तो एक कदम ही
कारण बन जाता विनाश का!

सत्ता की भूंख और अहंकार व्यक्ति को न केवल मदांध बना देते हैं, बल्कि उसे सर्वनाश की ओर धकेल देते हैं। यही क्रीयों के साथ हुआ और यही इस देश के आपातकालीन सत्ताधारियों के साथ भी हुआ-

मदोन्मत्त की शक्ति टूटती है
तिनके की तरह किसी दिन
और अक्ल आती है तब
जब अर्थहीन हो चुकता है सब!

मदोन्मत्त क्रीयों महत्वाकांक्षी होकर जिद्दी हो जाता है और अपनी भानजी को उसे सगे भाई पॉलीनीसिस के शव का सम्मानजनक ढंग से अंतिम संस्कार करने से रोकता है-

हम आपने माँ-जाये भाई के शरीर तक
पहुँच न पाएँ
इस ख्याल से क्रीयों
खुद तशरीफ़ यहाँ लाने वाले हैं।
किसी ग़लतफ़हमी में रहना नहीं,
बड़ी चिंता है उनको।
हुक्म-उदूली अगर किसी ने की
तो सजा मौत की तय है
सो भी पत्थर मार-मार कर, संगरेज़ी से।

स्वार्थपरता में मनुष्यता भी भूल जाता है और सही रास्ते पर चलने वालों को भी व्यावहारिक हो जाने का सबक सिखाने लगता है। यहाँ तक कि मरे हुए रिश्तेदारों के सम्मान की फिक्र छोड़कर जीवित और सुखी लोगों से नाता जोड़ने की सलाह देने लगता है। इस्मेने भी अपनी बहन एंटीगोनी को यही सब कहती है, किंतु एंटीगोनी उसकी बात न मानते हुए दृढ़प्रतिज्ञ होकर कटाक्ष करती है और अंततः उसका हृदयपरिवर्तन करने में सफल भी होती है।

कोरस (समवेत स्वर) एक पात्र की भूमिका में है और चाटुकारों व अवसरवादियों के प्रतीक के रूप में उपस्थित है। ऐसे ही लोगों का जमघट आपातकाल के आगे-पीछे भारत की केंद्रीय सत्ता के इर्द-गिर्द जमा था, जिसने सत्ता को गुमराह कर दिया था और लोकतंत्र को खतरे में डाल दिया था। कुछ पंक्तियाँ देखिए-

हमें आपका रुख़ पसंद है।
सभी तरफ़ से आँख हमारी मुँदी हुई हैं
कान बंद हैं।
आप कहें, कानून वही है।
आप ख्याल जो ज़ाहिर कर दें
वही सही है।
हर जिंदा या मरे आदमी के बारे में
आप करें जो तय सो तय है।
आज अभय छा गया देश में; कृपा आपकी।

भ्रष्टाचार व रिश्वतखोरी न्यूनाधिक हर देश की सार्वकालिक समस्या रही है। क्रीयों द्वारा पहले पहरेदारों पर आरोप लगाना और फिर टैरेसिस (चार आँखों वाले बेहद ईमानदार भविष्यवक्ता) का अपमान करना इसी दिशा में संकेत करते हैं, किंतु ये आरोप क्रीयों के पतन को और अधिक शीघ्र कर देते हैं।

मजे की बात यह है कि त्रासदी के बीच में ही जीवन-दर्शन और नैतिकता के कारण निराशा का वातावरण आशामय हो जाता है। कोरस के माध्यम से यह प्रतीति ऐसा ही आभास देती है-

सबसे ज्यादा

अनुचिंतन

जब तूफ़ान तेज़ होता है, लहरें ऊँची-ऊँची जातीं

साबित कुछ भी नहीं बचेगा जब लगता है

तब इसकी छाती में जाने निर्भय

कौन तत्व जगता है।

एंटीगोनी ने अपने पिता की तरह ही नियम तोड़कर अपने लिए मौत चुनी थी और क्रीयों के छोटे पुत्र हैमन की भावी पत्नी होने के बावजूद क्रीयों ने एंटीगीनो के साथ पूर्ण क्रूरता व निर्दयता का व्यवहार किया। हैमन ने पिता को आइना दिखाने की असफल कोशिश की-

यह आदेश ग़लत है और राय यह

ज़ोर पकड़ती ही जाती है

आती है या नहीं आपके कानों तक

सो अलग बात है।'

परिणामतः हैमन एंटीगोनी की मौत के बाद आत्महत्या कर लेता है। हैमन की माँ यूरीडाइस अपने बड़े बेटे के निधन के दुख को किसी प्रकार सह सकी थी, लेकिन हैमन की मौत की पीड़ा को न झेल पाने के कारण वह भी आत्महत्या कर लेती है और इस प्रकार क्रीयों बिलकुल अकेला पड़ जाता है तथा अपने दुष्कृत्यों के दुष्परिणाम भोगने के लिए विवश हो जाता है। भाषा की बेबाकी, सटीक बिंबात्मकता व प्रतीकात्मकता, रूपक व उपमान-योजना, पात्रों का चयन व उनकी सीमित संख्या आदि अनेक दृष्टियों से भवानीप्रसाद मिश्र एंटीगोनी में गागर में सागर भरने का कार्य करते हैं।

निष्कर्ष यही है कि अपने किए का फल व्यक्ति को स्वयं ही भोगना पड़ता है, किंतु जब तक वह वास्तविक स्थिति को समझ पाता है, बहुत देर हो चुकी होती है। इतनी अधिक देर हो जाती है कि मित्र, सहयोगी, शुभचिंतकों के साथ-साथ घर और परिवार या तो दूर हो चुके होते हैं या फिर नष्ट हो चुके होते हैं। ऐसी दशा में धन या बल या छल किसी काम नहीं आते हैं। सच तो यह है कि खजाना चाहे जितना भरा हुआ हो, वह सुख नहीं खरीद सकता है। विडंबना यह है कि इतिहास में घटित हुई इस प्रकार की अनगिनत घटनाओं के बावजूद वर्तमान उनसे कोई सीख लेने की कोशिश नहीं करता है और बारंबार इतिहास को दोहराता रहता है और भवानीप्रसाद मिश्र ने एंटीगोनी के माध्यम से यही बात प्रमाणित की है। ■■

डॉ अश्विनी कुमार शुक्ल

आज मुझसे बोल, बादल!

आज मुझसे बोल, बादल!

तम-भरा तू, तम-भरा मैं,

गम-भरा तू, गम-भरा मैं,

आज तू अपने हृदय से हृदय मेरा तोल, बादल।

आज मुझसे बोल, बादल!

आग तुझमे, आग मुझमें,

राग तुझमे,राग मुझमें,

आ मिलें हम आज अपने द्वार उर के खोल, बादल।

आज मुझसे बोल, बादल!

भेद वह मत देख दो पल

क्षार जल मैं, तू मधुर जल,

व्यर्थ मेरे अश्रु, तेरी बूँद है अनमोल, बादल।

आज मुझसे बोल, बादल! ■■

निशा निमंत्रण से
हरिवंश राय बच्चनबादल!

अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते।
इति मत्वा भजन्ते मां बुधा भावसमन्विताः।।

मैं वासुदेव ही सम्पूर्ण जगत की उत्पत्ति का कारण हूँ और मुझसे ही सब जगत चेष्टा करता है, इस प्रकार समझकर श्रद्धा और भक्ति से युक्त बुद्धिमान भक्तजन मुझ परमेश्वर को ही निरंतर भजते हैं।

श्रीमद्भगवद्गीता (10.8)

आम...

सच्चे कवि या लेखक मूलतः द्विज होते हैं। उनके दो जन्म होते हैं- एक शारीरिक और एक आध्यात्मिक। शरीर से वे दूसरे मनुष्यों के जैसे ही होते हैं- काले या गोरे, थुलथुल या मरियल, लम्बू या नाटे, सुदर्शन या कुदर्शन- पर भीतर से वे केवल प्रेम होते हैं, प्रेम का परिशुद्ध अवतार । क्योंकि दूसरे जन्म में उनका प्रेम का संस्कार जो होता है। मैं भले ही कोई बड़ा लेखक या कवि नहीं बन पाया, पर हूँ वही।यह मेरा दूसरा जीवन है। तभी तो अब तक यह लम्बा जीवन प्रेम और केवल प्रेम की कथा श्रृंखला से अधिक कुछ नहीं रहा। अगर सांसारिक दृष्टि से कुछ पाया भी तो केवल किसी के प्रेम में कुछ करने की प्रेरणा के कारण। किन्तु इस बार का प्रेम विशेष है। कुछ महीने पूर्व तक मुझे यह आभास भी नहीं हो सकता था कि जीवन का गहनतम प्रेम अभी आने को है।

मैं उन उर्दू शायरों की तरह तो नहीं ही हूँ जो माशूक का नाम लेने में लजाते हैं। मैं अपने प्रेम पर सीधे आता हूँ वह है एक आम। ध्यान दीजिए यहाँ मैं किसी जातिवाचक संज्ञा की बात नहीं कर रहा हूँ। एक आम विशेष की बात कर रहा हूँ। एक विशेष वर्ग के, विशेष प्रान्त, विशेष क्षेत्र, विशेष वृक्ष की एक विशेष शाखा का एक विशेष आम । छोटा सा, हरा-पीला, कमला सरकस के जोकर की तरह पतली सी डाल पर झूलता, हवा के साथ फुदकता, सुख से लटकता, प्यारा सा एक आम। सच मानिये मैं एक आम के फल की ही बात कर रहा हूँ जिसे मैं प्रातः काल बिस्तर से उठते समय खिड़की के बाहर देखता हूँ। जब मैं उसे देखता हूँ तो केवल उसे ही देखता हूँ। वह किसी महिला मित्र का रूपक नहीं है, वह स्वयं ही मेरी इस लघु कथा का मुख्य पात्र है।

वह सदैव ही वहाँ नहीं था। उसके यहां आने से पहले और बहुत सी चीजें थीं। पहले हरी-भरी डालों से भरा एक वृक्ष था जिसपर दूर देशों से आकर पक्षी गवैये विश्राम करते थे और कुछ देर के लिए नाचते गाते थे। फिर वहाँ अमलताश के पुष्प-गुच्छों से दिखने वाली एक आम की बौर की बेड़नी आकर रहने लगी। वो कोई ऐसा सुगंधित इत्र लगाती थी कि उसकी सुगन्ध हवा के साथ दूर-दूर तक फैल जाती थी। कुछ दिन रहकर वह वल्लरी चली गई। किराये के आवासों में बहुत दिन तक एक ही लोग थोड़े ही टिकते हैं। फिर मुझे लगता है वहाँ कुछ समय के लिए आम्र -शावकों का विद्यालय खुला था। सुबह-सुबह मैं देखता था कि वहाँ लघु आकार के बहुत से आम्र फल जमघट लगाये बैठे रहते थे। और जब सब चले गये, रह गया एक केवल मेरा महाप्रेमी मित्र ।

मैं सोच भी नहीं सकता था कि कैसे चार दिनों में हम इतने आत्मीय हो जायेंगे। शायद मैं पिछले जन्म में यही एक आम था अथवा वह आम अगले जन्म में एक प्रोफेसर बनने की यात्रा पर है। आखिर हम सब एक कभी न शेष होने वाली कुर्सी दौड़ का भाग ही तो हैं।

आप पूछेंगे मुझे उसकी क्या चीज पसंद है। तो क्या मुझे यह भी समझाना पड़ेगा कि प्रेम और वाणिज्य एक बात नहीं। जहाँ प्रेम होता है वहाँ प्रेमास्पद की कोई एक बात अच्छी नहीं लगती। वह स्वयं में अच्छा लगता है, अपनी संपूर्णता में। मैं उसे इस रूप में नहीं देखता जैसे लंगडा, हापुस, दशहरी या काला कलमी आदि जाति के अन्य आमों को। वह मेरे भीतर के अणु-परमाणुओं को पहिचानते हैं और यही प्रेम है।

मेरा आम दूसरे सभी आमों से अलग है। मैं प्रेम की दृष्टि से देखता हूँ कि यह कैसे इस दुखों से भरे नश्वर संसार में आनंद में है। उसके लिए आज ही अतीत है और आज ही भविष्य की कल्पना है। आप सोचते होंगे कि उसका भविष्य क्या है। कल कोई गिलहरी आकर उसे आधा खा जाएगी। अथवा तीव्र हवा में टहनी से गिरकर वह धरती पर गिर जाएगा और फट जाएगा।यदि वर्षा और अधिक विलम्बित हो गई तो वह झूलता - डोलता सूख जाएगा और पिचक जाएगा या पृथ्वी पर गिरते ही आवारा बच्चे उस पर झपट पड़ेंगे और वह मर जाएगा। क्या मालूम कोई शैतान बच्चा पत्थर मार कर उसका सर ही फोड़ दे। उसे इन सब बातों की चिन्ता कभी नहीं है। वह सच्चा आमहै। अपने भविष्य के लिए या अपनी प्यारी गुठली के भविष्य के लिए न वह प्रार्थना करता है,न लाल किताब खरीदता है, न दूसरे आमों की तरह भयभीत होकर आंसू बहाता है। भगवान भास्कर जब ऊपर अपने सिंहासन पर बैठे हैं और सारा विश्व उनके अनुशासन के ताप से जल रहा है, वह देखो आनंद से गुनगुना रहा है। संसार के कोलाहल में जब कभी कभार कोई प्राण भर कर गाता है तो उसके स्वर दूर-दूर तक सुनाई देते हैं। हवा बहती है तो वह उछलता है। हवा रूक जाती है तो वह ध्यानस्थ हो जाता है।

मेरा जीवन भी तो ऐसा ही है। जहाँ मैं रहता हूँ वहाँ अनेक किरायेदार रह चुके हैं। एक असहाय शिशु, एक शैतान बच्चा, एक डरा सहमा सा किशोर, एक विद्यार्थी, एक प्रेमी, एक कवि, एक पिता, एक भ्रष्ट्राचारी गृहस्थ और एक चिन्तक। अब यहाँ कोई नहीं रहा। वे सब हवा हो गये और मैं प्रकट हो गया। मेरे प्रेमी आम की तरह मैं अपना अतीत और भविष्य दोंनो हूँ। उसके भीतर एक गुठली है और एक ऐसे विशाल उपवन की संभावनायें जो पर्यावरण के सारे कूट विष को नीलकंठ की भाँति गटक जाए।

बौछार

मेरे भीतर एक प्रेम है जो संभावना है। वह एक पुराने वृक्ष पर झूल रहा है, मैं पुरानी मान्यताओं के अंधे समाज की छाती पर खड़ा हूँ। वह शून्य है, अनिमित्त है और आत्मनिहित्तव को समझता है। मेरे लिए उसके समस्त अंग एक इन्द्रजाल की तरह है। मैं उसे देखता हूँ तो फिर अंधा हो जाता हूँ। वह एक छोटा सा आम मेरे मन, मानस, आत्मा और संज्ञा में प्रवेश कर जाता है। वही वेदना है, वही संस्कार है, वही संज्ञा है। आम है तो मैं हूँ, आम न होता तो न मैं होता न मेरा यह सब कर्म। प्रेम शब्द का एक अर्थ अन्योन्य क्रिया होनी चाहिए।

प्रेम की बहुत सी बातें हैं। कुछ खुलकर की जाने योग्य, कुछ छुपाने योग्य। छुपाने वाली बात यह है कि इस संसार में प्रेम संबंध वाणिज्य का ही दूसरा रूप है मैं अपने प्रेमी का कुछ-कुछ मंगल चाहने लगा हूँ। अभी कुछ देर पहले एक बड़ा सा मोर कहीं से आकर उसके पास वाली डाली पर आकर बैठ गया और इधर-उधर चोंच मारने लगा तो मेरा ह्दय रो उठा। बुद्धि एक नक्षत्र की तरह हो गई और पैर निष्प्राण कांपने लगे। मैं डर गया कि यह मोर मेरे आम को सदा सदा के लिए अपने अवलम्बन से गिरा न दे। अभिमानी आम उस टहनी पर फिर से नहीं लौटेगा। क्या प्रेम का ताप से कोई अभेद्य संबंध है। क्या इसलिए मैथिलीशरण गुप्त ने कहा था कि'दोंनो ओर प्रेम पलता है।' पतंगा भी जलता है और दीपक भी जलता है।बताने वाली बात यह है कि मैं जलन में भी मगन हूँ। इस आम के प्रेम ने मुझे तेज धूप में पूर्णमासी का आशीर्वाद दिया है। कल यह आम यहाँ नहीं होगा। संसार एक तपते तवे पर गिरते, मृगमरीचिका में फंसे मनुष्य की आँख के आंसुओं से अधिक क्या है ? मैं रहूँगा आम के रंग में, नृत्य में, और उसकी नश्वरता के संगीत में। वह मुझे अपनी गुठली बनाना चाहता है और मैं उसकी गुठली बनना चाहता हूँ। एक सुन्दर संभावनाओं की गुठली।

अंत में यही कहता हूँ कि आम की ऋतु है। अपने घर से बाहर निकलो। कोयल बोल रही है, मोर नाच रहे हैं, गुलमुहर जा चुके हैं। नदियाँ सूख चुकी हैं। गुलाब झड़ चुके हैं। बादल आने को हैं। तुम्हारा प्रेमी तुम्हारी प्रतीक्षा में है। दुर्बल करने वाली मान्यताओं से निकलो।संभव है तुम्हें भी तुम्हारा वह खोया हुआ प्रेमी इस बार उत्सव में मिल जाये।

लेकिन ठहरो! यह क्या हुआ? एक गाती हुई चिड़िया आई। उसके लाल पंख सुलग रहे हैं। वह पेड़ पर बैठ कर गा रही हैं। वृक्ष में आग लगी है। धुएं में मैं देख नहीं सकता कि मेरे आम की दशा क्या है? मेरा मन करता है कि वह वहीं होगा। मेरा प्यारा छोटा सा गोलमटोल आम वहीं होगा।

जब अगली सुबह होगी, वो पेड़ नहीं होगा, आस-पास के कई पेड़ भी नहीं होंगे। मैं आँखें खोलकर बाहर खिड़की से देखूँगा तो भी वह वहीं बिना किसी सहारे के ऊपर आकाश में वैसे ही उछल-कूद कर रहा होगा। जिन्हें प्रेम का सहारा मिल जाता है वे डाल और टहनियों को नहीं ढूँढ़ते। ■■

अनाम

ग़ज़ल

क्या मेरा गुनाह है, बता क्या मेरी ख़ता है।
इतना तो बता दे मुझे, क्यूँ! मुझसे खफ़ा है?

ग़मगीन है चेहरा तेरा, मायूस निगाहें।
क्यों आज ये दामन तेरा , अश्कों से भरा है?

मैं प्यार के मोती, तेरी यादों में पिरो दूँ।
अब और न कुछ पास मेरे इसके सिवा है।।

आईना तो आईना है, खामोश रहेगा।
आ पूछ मेरे दिल से, तेरे चेहरे में क्या है?

कभी ख्वाबों में हो जाती थी दम भर को मुलाकात।
अब नींद भी ज़ालिम, मेरी आँखों से जुदा है।।

तुझसे जुदा होकर यह तेरा मज़लूम दीवाना।
तेरे शहर की गलियों में तुझे ढूँढ रहा है।।

किस तरह मिटा दूँ तेरी यादों को मैं 'फिरोज़'।
दिल की हर दीवार पे तेरा ही नाम लिखा है।। ■■

राधे मोहन शर्मा (फिरोज़)

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा।।

दुःखों का नाश करने वाला योग तो यथायोग्य आहार-विहार करने वाले का, कर्मों में यथायोग्य चेष्टा करने वाले का और यथायोग्य सोने तथा जागनेवाले का ही सिद्ध होता है।

श्रीमद्भगवद्गीता (6.17)

आईआईटी में तीन दशक

कल की बात है। लिफ्ट में चढ़ते हुए सरिता ने मुस्कराया। सरिता फिर बोली - "सर, कितने साल हैं? आप बहुत कमजोर भी हो गए हैं। वजन बहुत कम हो गया है। क्या कोई समस्या है?" झूठ क्यों बोलूं, मुझे बुरा तो बहुत लगा। चाहता तो कह सकता था-सरिता तुम भी तो बुढ़ा गई हो और अब कितनी भद्दी लगती हो, पर उदारता का परिचय देते हुए मैं मुस्कराया और बोला 'अभी हैं।' मैं अपने कक्ष में आ गया और फिर सोचता हूँ - हाँ तीन दशक हो गये हैं। गंगा में कितना पानी बह गया है। तीन दशक, अर्थात तीस वर्ष। अर्थात शतेक पाठ्यक्रम। अर्थात पंचशत परीक्षाओं का मूल्यांकन। अर्थात् अपने ही पैदा किये प्रायःतीन सहस्त्र प्रश्नों के उत्तर पढ़ना। अच्छे, बुरे, पुनरावृत्त, कुछ परिवर्तनशील, कुछ स्थिर। तीन दशकों की अनेकानेक बातें हैं। रोज के जीवन में कुछ ऐसी बातें होती हैं कि कह दें तो कारावास हो जाये, कुछ ऐसी कि कह दें तो महात्मा लगें। यहाँ मैं कुछ कहने लायक बातें ही कहता हूँ जो मेरी भी हैं और मेरे समाज की भी। हो सकता है एक-आध बात आपके काम की हो।

यदि एक दो वाक्यों में ही कहना हो तो मैं कहूँगा कि गत तीन दशकों में जो एक बड़ा परिवर्तन हुआ है वह यह कि अब साँप बिच्छू और स्वभाव से ही पागल कुत्ते कम दिखाई देते हैं। छिपकलियाँ बढ़ गई हैं। उसे आप सत्य का सपाट बयान भी मान सकते हैं और रूपक भी। यद्यपि साँप कृषक के सच्चे हितैषी होते थे पर उनसे डर लगता था। वे कालीन के नीचे, खिड़की के पास, दरवाजे पर, छात्रावासों में और शैक्षणिक क्षेत्र सभी स्थानों पर पाये जा सकते थे। छिपकलियों को देखकर ऊब तो होती है पर वे काटती नहीं हैं। और आप खा-पीकर खाल को मोटा कर लें तो ऊब भी नहीं आती।

अधिकांश साँप सेवानिवृत्त हो चुके हैं। जो एकांगी मत के थे वे स्वर्ग या नरक में चले गये हैं। जो मध्यस्थ दर्शन को मानते थे उनके मुकदमें लम्बित हैं, और वे टी-पाइन्ट पर प्रतीक्षा कर रहे हैं।

सुविधाएं बढ़ी हैं। टेलीफोन, मोबाइल, ए सी, पी सी, मंदिर, भवन, सड़कें, प्रकाश, जल सब बढ़े हैं। घटी है तो सोच, पहले के विद्वान स्थानीय समस्याओं को भूमण्डलीय दृष्टिकोण से देखते थे। आज भी लगता है कि यदि हम कोई साधारण सी बात भी हो जैसे कक्ष के बाहर नामपट्टिका लगानी हो, तो एक कहेगा कि उसके स्थान को प्रत्ययाश्रित दृष्टिकोण के अभाव में तय नहीं किया जा सकता। दूसरा कहेगा कि शर्माजी नेमप्लेट के बाहर निकलो साम्राज्यवाद और निरंकुश पूँजीवाद समाप्त हो रहे हैं नामपट्टिका के गतिविज्ञान को केवल वर्ग संघर्ष के ढांचे में देखना होगा। अब ऐसी सोच नहीं है। अब स्थानीय व स्वयं के वषयों से बाहर जाने की क्षमता समाप्त हो गई है। वेतन, सुविधाओं, भवन-निर्माण और वित्त-संबंधी समस्यायें अधिक महत्वपूर्ण हो गई हैं।

आईआईटी का भारतीयकरण हुआ है। भारतीय परिवेश में सर्वाधिक वेतन पाने वाले और सर्वाधिक असहाय दोनों प्रकार के जीव पैदा हो गये हैं। विडम्बना यह है कि सर्वाधिक शर्मा सर्वाधिक दुःखी हैं। सर्वाधिक शर्मा का ए सी उतना इफैक्टिव नहीं है, दुखी क्यों न हों? सर्वहारा सिंह जेठ की धूप में हँसी-खुशी काम कर रहे हैं क्योंकि यह जीवन की बाध्यता है। दोनों की दुनियायें अलग-अलग दुनियायें हैं।

विद्यार्थी एक ऐसे उपभोक्ता की तरह व्यवहार करते हैं जो मूल्य तो देने के लिये तैयार हैं पर बदले में सामान खरीदने से बचते हैं। उनकी संख्या बढ़ गई है-किन्तु कक्षा की उपस्थिति कम है। क्लासरूम सोने, कला प्रेम प्रदर्शित करने, खेलने और अगली रात के कार्यक्रम बनाने की जगह बनते जा रहे हैं। गलती हमारी भी कम नहीं है। देश के श्रेष्ठतम् युवाओं का चयन कर हम क्यों उन्हें वे सब दण्ड-बैठक कराते हैं जो उनकी दृष्टि से उनके किसी काम के नहीं हैं। देश के सर्वश्रेष्ठ युवाओं को क्यों अपना पाठ्यक्रम चुनने की पूर्ण स्वतंत्रता नहीं है? कहीं-२ तो लाटरी से कोर्स देने की प्रथा भी है। मैं स्वयं संकाय-सदस्य होने के कारण दोस्तोवस्की के सामान्य पात्र की भाँति अपने को इतिहास का दोषी पाता हूँ।

नियमित कर्मचारियों की संख्या घटी है। गर्वीले और लड़ाकू कर्मचारी नहीं रह गये हैं। वे हवा हो गये जो कहते थे शर्माजी अगर आईआईटी विश्वस्तरीय संस्था है तो उसमें हमारा भी योगदान है। एक सुन्दर बगीचा सभी प्रकार के सुन्दर पुष्पों से बनता है। कुछ सुन्दर, कुछ असुन्दर से नहीं। हमें भी अधिकार दो। आज ठेके के कर्मचारी विवश हैं, नम्र, विनीत, चमचा टाइप। एक सामान्य धारणा है कि नियमित पद, सुविधाएं और सम्मान तलुए चाटने से मिलते हैं। योग्य और स्वाभिमानी मनुष्यों के लिए अच्छा समय नहीं है। समस्या व्यक्तित्व की नहीं है। आज के कर्मचारी अधिक योग्य, परिश्रमी और उत्साही हैं। समस्या सामाजिक है। ठेके की प्रथा ने आत्मा को कुचल दिया है। भारत में तो यही होना था।

बौछार

पाठक, यदि मैं निराश या आलोचक टाइप दिख रहा हूँ तो क्षमा चाहता हूँ। मैं अपने अनुभवों की बात कर रहा हूँ। यह संस्थान की वस्तुस्थिति का विवरण नहीं है। मेरी ईश्वर से प्रार्थना है कि मेरा अंकन असत्य ही हो। यदि सकारात्मक दृष्टिकोण से देखा जाए तो क्या उपाधियाँ प्राप्त, कुर्सी प्राप्त, प्रोन्नति प्राप्त, शाल प्राप्त, सम्मान प्राप्त और सुखी-सम्पन्न लोगों की संख्या नहीं बढ़ी है? अवश्य बढी है और मुख्य रूप से पिछले दस वर्षों में। आज गरीब से गरीब भी संस्थान में लॉन लेकर जिस धूम-धाम से लड़के-लड़कियों की शादी करता है वह संस्थान की प्रगति का एक छोटा सा किन्तु अच्छा परिचायक है।

सुबह-सुबह घूमते हुए बूढ़े सेवानिवृत्त लोग मिलते हैं। उन्हें देखकर लगता है कि काल बहुत बड़ा उग्र समाजवादी है। ऐसे लोग मिलते हैं जो निष्ठावान और समर्पित थे और जिनका कार्यकाल सफेद बैंगनों जैसा सफेद था। दूसरे वे जो दुष्ट थे, अकुशल थे और जिनका कार्यकाल शनिदेव की मूर्ति की तरह काला था। आस-पास रहने वाले वरिष्ठ प्राध्यापकों से सफाईकर्मी तक सब मिलते हैं और आज किसी वर्गविहीन समाज के सदस्य लगते हैं। सबके सुख-दुख एक से हैं। मधुमेह, रक्तचाप, घुटने बलदते, गंजा हो जाने, एन्जियोप्लास्टी और पुत्र-पुत्रियों के सताये सब एक जैसा मुस्कुराते हैं। काश! कि ये आज जिस एकता के साथ अनुलोम-विलोम में संलग्न हैं या सब मिलकर नीम की कोमल पत्तियों को ढूँढ़ते हैं उसी एकता और सम्मान के साथ जीवन के प्रमुख वसंत निकाले होते। मार्क्स ने सही कहा था-वर्गविहीनता से वर्ग बनते हैं और वर्ग संघर्ष से समानता आती है। जन्म से एक, युवावस्था में भिन्न, और श्मशान में एक यही तो जीवन का सत्य है। काश कि हम युवावस्था में ही इस बात को समझ लें और रोते हुओं को हिम्मत बंधाये। मैं जब आईआईटी से चला जाऊँगा तो अपने एक मित्र की बात नहीं भूलूँगा।

वे रसायन विज्ञान की लैब में काम करते थे। तरह-तरह से समाज सेवा से जुड़े थे। मेरे बहुत निकट थे। उनकी लड़की ने आत्महत्या की थी। पता लगने पर जब मैं उनके पास पहुँचा (वे शान्त खड़े थे) तो उन्होंने कहा शर्माजी रोइये नहीं मुझे हिम्मत दीजिए। पिछले तीस सालों की आईआईटी से यह मेरी सबसे मूल्यवान सीख है। 'न रोओ और रुलाओ भी मत। एक दूसरे को साहस प्रदान करो। बुरी से बुरी घड़ी में भी किसी को यह मत कहो कि तुम बरबाद हो गये', जैसा मैं कुछ शुभचिंतकों से अपने दामाद के मरने पर सुन चुका हूँ।

आईआईटी में मैंने चाहे-अनचाहे अनेक रूप देखे हैं। एक बालक की तरह जो रामलीला के दिनों हर शाम रामलीला स्थल पर पहुँच जाता और जब प्रबन्धक लोग कपड़े उछालते तो कुछ भी पा लेने की कोशिश करता। कमीज, नेकर या दोनों। जिस दिन लाल पोशाक मिल जाती तो वह राम की सेना में शामिल हो जाता और जिस दिन काली तो रावण की सेना में। उसे न राम में श्रद्धा थी न रावण से घृणा। मेरे तीस साल इसी तरह की रामलीला में गुजरे लगते हैं। लेकिन अब मुझे उन पंड़ित जी का रोल ज्यादा अच्छा लगता है जो घूम-घूमकर, गा गा कर हारमोनियम पर राधेश्याम की रामायण पढ़ा करते थे। उनका नाम था धर्मदेव वे मुसलमान से हिन्दू बने थे। उन्हें तो इस समाज ने बहुत सम्मान दिया पर उनके लड़के-लड़की की किसी ने शादी नहीं की और पूरा परिवार बहुत दुखी दरिद्र हालत में मर गया। लम्बा जीवन ऐसी बहुत सी छोटी-छोटी बातें बताता है। सरिता को मैंने यह नहीं बताया कि कितने साल और हैं। तुम्हें भी नहीं बताऊँगा।

मिलने-जुलने में अब मजा नहीं आता। जो चेहरे अच्छे लगते थे उनके चेहरे ढलक गये हैं, बीच से मुटा गये हैं और कई तो आँख या नाक में उंगली करते बुरे दिखते हैं। विद्यार्थियों की आँखों में चमक नहीं दिखती। नई पीढ़ी ऐसे देखती है जैसे हम दूसरे ग्रह से कुछ दिन के लिये आये हुए जादू हों।

जीवन के त्रिताप हैं औ घटती हुई क्षमता। लेकिन बहुत से शुभ लक्षण हैं। मैं अब स्वयं चीजों को अधिक स्पष्टता से देख पाता हूँ। शून्य के दृष्टिकोण ने जीवन और समाज को साफ-साफ देखना सिखा दिया है। नई पीढ़ी में बहुत उत्साह है, समर्पण है और रोल मॉडल के अभाव में भी प्रगति की सम्पूर्ण सम्भावना है। नई पीढ़ी विद्रोही है और सत्ता के किले ढ़ह रहे हैं। सत्ता का स्थान मूल्य ले रहे हैं। सरिता! अभी तो मैं हूँ। शायद तुम्हारे बाद तक। और जब जाऊँगा तो इस विश्वास के साथ कि व्यक्ति के या समाज के जीवन में मंगल की सम्भावनायें सदैव बनी रहती हैं। मेरा अनुभव है कि निराशा या संक्रमण के वर्तमान काल में भी यदि आप सत्य, मूल्यों या मंगल की बात करते हैं तो (भले ही युग उन्हें व्यवहार में लाने की छूट नहीं देता हो) अनेकों लोग आप के पास आकर खड़ें हो जाते हैं। मुझे भी वे अनेक मिल गये हैं जो मुझे सत्य पर चलने के लिये बाध्य करेंगे। ■

अरुण कुमार शर्मा

सांभा की चिट्ठी, गब्बर के नाम

तुम्हारी कम्पनी से अब मन भर गया है, गब्बर।
कितने आदमी थे?
कालिया कोई संगणक है क्या?
वो चार कहता तो तुम क्या कर लेते?
होली कब है?
मैं कोई कैलेण्डर हूँ क्या?
होली दीवाली के दिन आती, तो तुम क्या कर लेते?
तुम चाहते हो केवल जानकारी, और जानकारी,
बस जानकारी, नो समझदारी।
बहुत समय बाद मेरी समझ में आया है,
तूने इन प्रश्नों का जीनर कहाँ से उठाया है।
कितने रिसर्च पेपर हैं?
कितनी थीसिस कराई हैं?
इन सबके लिए प्रौपर एक्नालिजमैंट दे, बैंडिटलाल।
वर्ना उठ खड़ा होगा प्लैजियरिस्म का बवाल।
तुमने बहुत फैला लिया आँकड़ों का माया जाल,
अब आगे बढ़े तो हो जाएगा बवाल।
मुझे अब क्वाटिटेटिव और क्वालिटेटिव में
दिखता है अन्तर भारी।
क्वालिटेटिव देती है केवल जानकारी,
क्वालिटेटिव में समझदारी।
क्वालिटेटिव से तुम्हें क्या मिला?
तुम रहे धौल्या की आधी बोरी अनाज के
नाजायज अधिकारी।
असल में तुम हो,
पचास कोस दायरे के एक भिखारी।
गब्बर, टू जी और सी डब्ल्यू जी के संदर्भ में,
तुम केवल एक टुच्चे उठाईगिरे दिखते हो,
सिंहासन छोड़ो, नई पीढ़ी से कुछ सीखो,
आगे बढ़ो, वर्ना दो कौड़ी में बिकते हो।
रामगढ़ की वादियों से उठाया हुआ कुछ भी,
तुम्हारे पास बचा है तो,
उसे इनवैस्ट करो।
राजा को ट्यूटर बनाओ, कलमाड़ी को कोच रखो।
किसी आदर्श आवास समिति में घुस जाओ,
खुद खाओ, अपनों को खिलाओ।
उसे इनवैस्ट करो।

सांभा उखड़ गया।
गब्बर पर चढ़ गया।
गब्बर तुम अनाड़ी हो।
चुके हुए खिलाड़ी हो।
बॉस के अगाड़ी और घोड़े के पिछाड़ी को भी बदल जाते हो।
बॉस को गब्बर और घोड़ी को धन्नों बताते हो।
क्यों अपनी फजीहत कराते हो?
नए जमाने में एक्सीडेंट के मायने बदल गए हैं।
इन्फार्मेशन टेक्नालॉजी के युग में,
साइमल्टेनिटी ऑफ स्पेस एंड टाइम के जमाने लद गए हैं।
अब घोड़ियों से डर नहीं लगता, गब्बर।
हाँ, साहेब को आउटरीच के पर लग गए हैं।
आप कहीं भी हों, साहेब के अगाड़ी ही समझे जाएंगे।
इसी गुस्ताखी की भरपूर सजा पाएंगे।
तुम अब बुढ़ा गए हो, गब्बर।
अब नया न कुछ सीख पाओगे।
तुम सलेक्टिव ब्रीड़िंग की एक शाखा के हो कर रह जाओगे।
मैं भी बूढ़ा गया हूँ, गब्बर।
किन्तु मुझे सलेक्टिव ब्रीडिंग की एक शाखा की भी हे खबर।
उसमें वो लोग आते हैं,
जो अपनी पेंशन पाने के लिए सालों बिताते हैं।
सही वेतन भत्ता पाने के लिए अनेक डंडे खाते हैं।

भारत के विभिन्न प्रदेशों के बीच हिंदी प्रचार द्वारा एकता स्थापित करने वाले सच्चे भारत-बन्धु है।

श्री अरविन्द

बौछार

तुम क्वालिटेटिव में भी तो कुछ न कर पाये।
असल सरदार वो जो रजनीकान्त की तरह
एक गोली से दो को निशाना बनाए।
मैं तो कहूँगा, उससे भी आगे बढ़ जाए।
गोली को छुरी से स्पिलट करने के बजाय,
कांटे से स्पिलट कराए।
और एक ही गोली से,
चार को मार गिराए,
तुम अगर पढ़े लिखे होते, गब्बर
तो किसी शोध संस्थान में जाते,
वहाँ दूसरे द्वारा चलाई गई गोली को,
हार्वेस्ट करने की खोज कराते।
खोल अलग, बारूद अलग, बस
जब चाहे, नई गोली बनाकर चलाते।
क्या बात करते हो सांभा?
मैंने तुम्हें हमेशा ऊँची चट्टान पर बिठाया।
अरे धर्मयुद्ध के कलयुगी अवतार,
तुममें दूरदृष्टि न होते हुए भी,
तुमको दूर तक दृष्टि रखने के काम पर लगाया।
छोटे-मोटे एक्सीडेन्ट्स से क्यों घबड़ा जाते हो?
थोड़ा संयम क्यों नहीं दिखाते हो?
क्यों गब्बर के अगाड़ी और धन्नों के पिछाड़ी आते हो?
कभी किसी शहंशाह की सवारी निकलने पर।
रास्ते में ही इस दुनिया से विदा हो जाते हैं।
तुम ये प्रश्न क्यों नहीं पूछते गब्बर?
यहाँ दो शाखा क्यों हैं?
कुछ मरने वाले, कुछ मारक क्यों हैं?
कुछ जीना चाहते हैं, बाकी भक्षक क्यों हैं?
यहाँ संहार का तांता क्यों है भाई?
यहाँ इतनी भीड़ क्यों है भाई?
और भीड़ है तो फिर,
यहाँ इतना सन्नाटा क्यों है भाई?
यहाँ इतना सन्नाटा क्यों है भाई?
यहाँ इतना सन्नाटा क्यों है भाई? ■■

नरेन्द्र कुमार शर्मा

क्या आप जानते हैं?

- ऊँट की जीभ इतनी लंबी होती है कि वह अपने कान स्वयं साफ कर सकता है।
- पूरी दुनिया के तालाबों को मिला भी लें तब भी कनाडा में मौजूद तालाबों की संख्या का मुकाबला नहीं कर सकते।
- 90 प्रतिशत शिकार शेरनी करती है।
- मच्छर के 47 दाँत होते हैं, और वो 18 फीट की दूरी से ही अपने शिकार को पहचान लेते हैं।
- गाय के आगे के दाँत नहीं हैं फिर भी वह हर दिन 8 घंटों में 15 किलोग्राम खा लेती है।
- एक व्यक्ति के पूरे जीवन में हृदय जितना खून पम्प करता है उतने में तीन बड़े-बड़े टैंकर भर सकते हैं। हमारा हृदय प्रतिदिन 100,000 भर धड़कता है।
- पेगूइन अपने जीवन का 75 प्रतिशत समय समुद्र के अंदर भोजन की खोज में बिताती है।
- अंग्रेजी वर्णमाला के ABCD ऐसे अक्षर हैं जिनका 1 से 99 तक की गिनती को अंग्रेजी में लिखने पर इस्तेमाल नहीं होता क़ पहली बार हंड्रेड में लिखा जाता।
- ध्रुवीय भालू एक बार में 86 पेंगुइन खा सकता है
- जब आप गुस्सा करते हैं तो चेहरे की 43 मांसपेशियों को हरकत करनी पड़ती है, जबकि हँसते वक्त सिर्फ 17 माँसपेशियों का इस्तेमाल होता है।
- पश्चिमी वर्जीनिया में यदि कोई व्यक्ति दौड़ लगाकर जानवर से आगे निकल जाए तो वह जानवर को ना सिर्फ घर ले जा सकता हैं बल्कि उसे पकाकर खा भी सकता हैं।
- इंग्लैण्ड के किसानों को कानूनी हिदायत है कि वे अपने सुअरों के मनोरंजन के लिए उनके पास खिलौने भी रखें।
- मानव शरीर की सबसे मजबूत मांसपेशियाँ जीभ की होती हैं। साथ ही अपनी जीभ से अपनी कोहनी को मानव नहीं पा सकता।
- एक घंटे सोप ओपेरा कार्यक्रम देखने में तीन घंटे के बेसबॉल के मैच देखने से भी ज्यादा कैलोरी खत्म होती है। ■■

स्वाति तिवारी
छात्रा

हिंदी और उर्दू के छंदों में ध्वन्यात्मक साम्यता

काव्य मानवीय संवेदनाओं की कोमल अभिव्यक्ति है। कविता अनायास ही श्रोता / पाठक को रस और आनंद के अलौकिक साम्राज्य में प्रवेश कराती है। कि जब रचना में मात्रा, वर्ण, यति, गति आदि का ध्यान रखा जाए तो रचना छंदबद्ध कहलायेगी जिसे पद्य कहते हैं। जो बिना छंद के हो तो गद्य और जहाँ दोनों हो वहाँ चंपू समझना चाहिये। यहाँ ये स्पष्ट कर देना उचित प्रतीत होता है कि कविता बिना छंदों के भी लिखी जा सकती है, लोग लिखते भी हैं, पर छंद रचना को आयु प्रदान करता है और कवि को सुकवि बनाने में सहायक होता है। यहाँ आलोच्य विषय हिंदी छंद (कविता आदि) और उर्दू छंद (गज़ल आदि) में अंतर्निहित साम्यता है। हिंदी छंद विज्ञान पिंगलशास्त्र के नाम से जाना जाता है और उर्दू छंद/बहर विज्ञान को इल्मे-अरूज़ कहा जाता है। यह एक रोचक तथ्य है कि उर्दू की कुछ बहरों को पढ़ते वक्त हिंदी के कुछ विशिष्ट छंदों का स्पष्ट आभास होता है। उदाहरण के लिए अधोलिखित पंक्तियों पर गौर करें-

तेरे प्यार का आसरा चाहता हूँ

वफ़ा कर रहा हूँ वफ़ा चाहता हूँ (बहरे मुतकारिब मुसमुन सालिम)

नमामी शमीशान निर्वाणरूपं

विभुं व्यापकं ब्रह्मवेदस्वरूपं (भुजंगप्रयात)

इन दोनों में इतनी साम्यता है कि दोनों को आप चाहें तो एक ही धुन पर गुनगुना सकते हैं। इस संबंधन में आगे बढ़ने से पहले कुछ तकनीकी शब्दों से परिचित होना आवश्यक है-

हिंदी छंद शास्त्र मुख्यतः संस्कृत साहित्य पर आधारित है। आचार्य पिंगल रचित 'छंदःसूत्रम् ' इस विषय की सर्वाधिक प्रामाणिक पुस्तक है। प्रयोग के हिसाब से छंदों के दो भेद हैं-वैदिक और लौकिक। वैदिक छंद सात हैं-गायत्री, उष्णिक, अनुष्टुप, वृहती, पंक्ति त्रिष्टुप और जगती। लौकिक छंद कई हैं जैसे-मंदक्रांता, घनाक्षरी, दोहा, चौपाई आदि। अब छंदों की नियम व्यवस्था पर आते हैं। इस हिसाब से मोटे तौर पर दो विभाजन हैं- मात्रिक छंद और वर्णिक छंद।

मात्रिक में सिर्फ मात्राओं का बंधन होता है साथ ही कहीं कहीं पर लघु, गुरु वर्णों का क्रम होता है जबकि वर्णिक वृत्तों में वर्णों का एक विशिष्ट क्रम होता है। एक छंद में सामान्यतया चार पाद होते हैं और अगर इन चारों पादों में समान योजना हो तो इन्हें सम, सम और विषम पादों में एक सी योजना हो तो अर्द्धसम, और सभी पादों में अलग योजना हो तो इन्हें विषम कहा जाता है। उदाहरण देखें-

मात्रिक - हरि अनंत हरिकथा अनंता (16 मात्रा, लघु गुरू वर्णों का कोई क्रम नहीं)

वर्णिक - जय राम सदा सुखधाम हरे (16 मात्रा, 'लघु-लघु-गुरू '24)

आगे हम सुविधा के लिए छंदों और बहरों में लघु को १ और गुरू अथवा दीर्घ को 2 से प्रदर्शित करेंगे। उर्दू बहरों की तुलना में हिंदी छंदों का क्षेत्र अत्यंत विस्तृत है। हिंदी वर्णिक छंदो की एक और विशेषता है इसका गण विधान। तीन वर्णों को मिलाकर एक वर्णिक गण बनता है जिनकी कुल संख्या आठ है। इसे निम्नरूप में याद रखें-

यमाताराजभानसलगा :

1. यमाता उ यगण उ 122
2. मातारा उ मगण उ 222
3. ताराज उ तगण उ 221
4. राजभा उ रगण उ 212
5. जभान उ जगण उ 121
6. भानस उ भगण उ 211
7. नसल उ नगण उ 111
8. सलगाः उ सगण उ 112

उर्दू छंद शास्त्र / इल्मे अरूज़ - इसको विकसित करने का श्रेय बसरा निवासी अल खलील बिन अहमद अल फरीदी को जाता है। ऐसा माना जाता है कि इन्हें संस्कृत और यूनानी छंदों का अच्छा ज्ञान था और इनसे प्रेरित होकर ही इन्होनें कुछ वाक्य विन्यास बनाए और

परिवर्तित होता है। गज़ल के पहले शेर को मतला और अंतिम शेर को मकता कहते हैं एवं शेर की दोनों पंक्तियों को मिसरा कहा जाता है। मकते के शेर में बहुधा शायर अपने नाम का प्रयोग करता है।

बहरों में यद्यपि लघु, गुरू वर्णों का क्रम निश्चित होता है तथापि हिंदी की तुलना में इन्हें मात्रिक माना जाता है क्योंकि यहाँ पर एक दीर्घ का काम दो लघु से चल जाता है जबकि हिंदी वर्ण-वृत्तों में ऐसा अनुमत्य नहीं हैं। निम्न उदाहरण से समझें -

हो गई है पीर पर्वत सी पिघलनी चाहिए (2122 2122 2122212)

इस हिमालय से कोई गंगा निकलनी चाहिए (2122 2122212212 212)

इसमें बहर के हिसाब से शुरुआती वर्ण दीर्घ होना चाहिए (2122 2122 2122 212) पहले मिसरे में 'हो 'दीर्घ है जबकि दूसरे मिसरे में 'इस ' में दो लघु वर्ण हैं जो दीर्घ की जगह प्रयुक्त हुए हैं। हिंदी छंदों में ऐसी छूट नहीं है। बहरों के संबंध में एक और रोचक तथ्य ये है कि कई बार दीर्घ को जल्दी से पढ़कर लघु का काम लिया जाता है। इस प्रक्रिया को गिराना कहते हैं, यानि दीर्घ गिरकर लघु हो जाता है। जैसे उदाहरण देखें-

इस हिमालय (2122) से कोई गं (2122) गा निकलनी (2122) चाहिए (212)

यहाँ 'कोई ' में 'को ' और 'ई ' दोनों ही दीर्घ हैं परंतु 'को ' लघु की तरह व्यवहृत हुआ है। हिंदी छंदों में सामान्यतः ऐसा नहीं होता।

हिंदी छंदों और उर्दू बहरों में साम्यता : वर्ण साम्य बनाम ध्वनि-साम्य

नीचे छंदों / बहरों के कुछ उदाहरण दिए जा रहे हैं जो लघु और दीर्घ वर्णो के विन्यास की दृष्टि से एक जैसे हैं-1. 122 122 122 122

छंद-भुजंगप्रयात (य य य य)

उदाहरण - नमामि शमीशान निर्वाणरूपं, विभुं व्यापकं ब्रह्मवेदस्वरूपं।

निजं निर्गुणं निर्विकल्पं निरीहं, चिदाकाशमाकाशवासं भजेऽहम् ।।(तुलसीदास)

बहर-बहरे मुतकारिब मुसमन सालिम

उदाहरण - सितारों के आगे जहाँ और भी हैं, अभी इश्क के इम्तिहां और भी हैं। (इकबाल)

2. 1212 1212 1212 1212

छंद-पंचचामर (ज र ज र ज ग)

उदाहरण-जटाटवीगलज्जल प्रवाहपावितस्थले। गलेऽवलंब्यलंबितां भुजंगतुंग मालिकाम।

डमडडममड्डमड्डमन्निनादवडमर्वयं। चकार चंडतांडव तनोतु नः शिवः शिवम।। (रावण)

हिमाद्रि तुंग श्रृंग से प्रबुद्धशुद्ध भारती। स्वयंप्रभा समुज्ज्वला स्वतंत्रता पुकारती। (जयशंकर प्रसाद)

बहर-बहरे हज़ज मुसमन मकबूज़ः

उदाहरण - ये क्या जगह है दोस्तों ये कौन सा दयार है (शहरयार)

अभी न जाओ छोड़कर कि दिल अभी भरा नहीं (साहिर लुधियानवी)

3. 2212 2212 2212 2212

छंद-हरिगीतिका (28 मात्रा, 16,12 पर यति)

उदाहरण - श्रीरामचंद्र कृपालु भजु मन, हरण भव भय दारूणम

नवकंज लोचन कंजमुख करकंज पद कंजारुणम्।। (तुलसीदास)

हम कौन थे, क्या हो गए हैं और क्या होंगे अभी

आओ, विचारें आज मिलकर समस्याएं ये सभी (मैथिलीशरण गुप्त)

बहर-बहरे रजज़ मुसमन सालिम

उदाहरण - कल चौदवीं की रात थी, शब भर रहा चर्चा तेरा (इब्ने इंशा

सोचा नहीं अच्छा बुरा, देखा सुना कुछ भी नहीं (बशीर बद्र)

4. 1222 1222 1222 1222

छंद - विधाता (28 मात्रा)

उदाहरण - तुम्हारी बांसुरी की तान में छिप रो रहा कोई

गुलाबी आँख अपनी आँसुओं से धो रहा कोई

तुम्हारे गीत में तारे झपकते हैं

कमल, मानो, सरोबर में निकलते, डूब जाते हैं (रामधारी सिंह दिनकर)

बहर-बहरे हजज़ मुसमन सालिम

उदाहरण - यहाँ हर शख्स हर पल हादिसा होने से डरता है

खिलौना है जो मिट्टी का फ़ना होने से डरता है (राजेश रेड्डी)

जैसा कि उपर्युक्त उदाहरणों में स्पष्ट है, समान विन्यास को देखते हुए कुछ विद्वान इस तरह के छंदों और बहरों को एक ही पैमाने से नापने की कोशिश करते हैं। लेकिन यहाँ ध्यात्वय है कि हिंदी और उर्दू की शैली में किंचित अंतर है। जैसे हिंदी के ब्राह्मण को उर्दू में बिरहमन लिखा और पढ़ा जाता है। अतः वर्ण के स्तर पर साम्यता खोजनी मुश्किल है। दूसरी बात लघु और दीर्घ वर्णों के निर्धारण में भी दोनों विधाओं में थोड़ा अंतर है। उदाहरण के तौर पर बहरों में दीर्घ की जगह दो लघु नहीं प्रयुक्त हो सकते जबकि बहरों में ऐसा संभव है। इस तरह हम देखते हैं कि छंदों और बहरों में वर्ण-साम्यता का विचार तर्कसंगत नहीं प्रतीत होता। यदि दूसरे दृष्टिकोण से देखें तो गज़ल मूलतः ध्वनि का खेल हैं। साथ ही वर्ण साम्यता न होते भी 'दो लघु अथवा एक दीर्घ' पढते वक्त समान समय लेते हैं यानि ध्वनि के स्तर पर साम्यता दिखलाते हैं। आप गौर करें तो पाएंगे कि एक प्रारूप वाले छंदों और बहरों को एक ही तरह से पढ़ा जा सकता है, एक ही धुन में गुनगुनाया जा सकता है। अस्तु, इनमें वर्ण-साम्य न मानकर ध्वनि-साम्य मानना ही युक्तियुक्त है। ■■

रविकान्त पाण्डे
शोध-छात्र

भाषा साहित्य और देश

नाना कारणों से इस देश में और बाहर यह बार-बार विज्ञापित किया जाता है कि इस महादेश में सैकड़ों भाषाएं प्रचलित हैं और इसी लिए इसमें अखण्डता या एकता की कल्पना नहीं की जा सकती। मैंने विदेशी भाषाओं के जानकारों और विदेश के नाना देशो में भ्रमण कर चुकने वाले कई विद्वानों से सुना है कि तथाकथित एक राष्ट्र व स्वाधीन देशों में भी दर्जनों भाषाएँ हैं और भारतवर्ष की भाषा समस्या उनकी तुलना में नगण्य है। परन्तु अन्य देशों में यह अवस्था हो या नहीं, इससे हमारी समस्या का समाधान नहीं हो जाता। दूसरों की आँख में खराबी सिद्ध कर देने से हमारी आँख में दृष्टि-शक्ति नहीं आ जाएगी। फिर भी मैं आपको स्मरण कराना चाहता हूँ कि हमारे इस देश ने हजानों वर्ष पहले से भाषा की समस्या हल कर ली थी। हिमालय से सेतुबन्ध तक सारे भारतवर्ष के धर्म, दर्शन, विज्ञान, चिकित्सा आदि विषयों की भाषा कुछ सौ वर्ष पहले तक एक ही रही है। यह भाषा संस्कृत थी। भारतवर्ष का जो कुछ श्रेष्ठ, है। जितनी दूर तक इतिहास हमें ठेलकर पीछे ले जा सकता है उतनी दूर तक इस भाषा के सिवा हमारा और कोई सहारा नहीं है। ■■

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी

आलस्य का संसार दुख का आगार

मानवीय गुणों एवं व्यक्तित्व का विकास निरंतर कर्मशील रहने से ही संभव है। आलसी, लापरवाह व टालमटोल करने वाला मनुष्य सदैव दुर्भाग्य को प्राप्त करता है।

आलस्य ही समय को नष्ट करता है, असावधानी व टालमटोल के स्वभाव को जन्मदेता है, उत्साह को मार देता है तथा पुरुषार्थ करने से रोकता है। जीवन में मिला उन्नति का सुनहरा अवसर दुष्ट आलस्य हमसे छीन लेता है। आलस्य ही हमें हर एक कार्य कल पर छोड़ने का प्रलोभन देता है।

आज करे सो काल्हि कर, काल्हि करे सो परसों
जल्दी-जल्दी क्यों करता है, जीना है जब बरसों।।

कर्तव्य बार-बार प्रेरित करता है-

निरंतर परिश्रम करते-करते असफल होने पर भी निराश न होकर पुनः सफलता के लिए यत्न करते रहना चाहिए। जो निराश या हतोत्साहित नहीं होता वही अपने लक्ष्य को पाता है। लक्ष्य की ओर तत्परता से चलने वाले व्यक्ति के जीवन में निराशा के लिए कोई स्थान ही नहीं होता। वह इस ओर ध्यान नहीं देता कि वह कितना कामयाब हुआ वरन् उसकी दृष्टि तो हमेशा इस पर रहती है कि वह अपने कर्तव्य का पालन कर रहा है या नहीं? ऐसा व्यक्ति सदैव प्रसन्न रहता है। आलसी, कामचोर, पलायनवादी व्यक्ति के जीवन में अंतर का आनंद-उल्लास और बल कहाँ?

मनुष्य के मन में यदि कार्य के प्रति आस्था और लक्ष्यप्राप्ति के लिए सच्ची लगन लग जाये तो सब प्रतिकूल परिस्थितियाँ, सब बाधाएँ अपने-आप ही समाप्त हो जाती हैं।

एङ्ड बड़ी महत्वपूर्ण बात है कि अधिक से अधिक कर्मशील व्यक्ति ज्यादा से ज्यादा संयमी होगा। जितने भी महान पुरुष हुए हैं वे सदा जीवन को उन्नत करने वाले विचारों के बीच में ही रहे। इसलिए आप भी कर्म करते-करते अपने शरीर और मन को इतना सुदृढ़ बना लो कि वह बुराइयों की ओर प्रवृत्त ही न हो।

ऐहिक व आध्यात्मिक विकास के लिए तत्परतापूर्वक प्राणायाम, जप, ध्यान, अनुष्ठान, सेवा व साधना - ये सब विद्यार्थी के सर्वश्रेष्ठ कर्म होने चाहिए हैं।

आलस्य हम पर तभी आक्रमण करता है जब हमारे सामने कोई लक्ष्य नहीं होता। इसलिए सर्वप्रथम अपना लक्ष्य निश्चित करें और फिर उसकी प्राप्ति के लिए चित्त में एकाग्रता लायें। सब कुछ भूलकर उसकी सिद्धि के लिए निरंतर प्रयत्न करें जिसके लिए सच्ची लगन के साथ भरपूर परिश्रम आवश्यक है।

परिश्रम ही सफलता की कुंजी है। जहाँ पौरुष है वहीं सफलता है। पुरुषार्थी व्यक्ति के लिए सब सुलभ है। जो व्यक्ति दिन-रात अपने कर्तव्य-कर्म में जुटा रहता है, वही सफलता पाता है। हमारे देश में जितने महान पुरुष हुए हैं वे अपने जीवन के एक-एक क्षण का सदुपयोग करके ही महान बने हैं। तुम्हें भी महान बनने के लिए लापरवाही व आलस्य छोड़कर तत्परता से कर्मयोग, भक्तियोग, ज्ञानयोग में लग जाना चाहिए।

अल्पहारी, गृहत्यागी, श्वान निद्रा तथैव च।
काक चेष्टा, वको ध्यानम् विद्यार्थिनम् पंच लक्षणम्।।

हे विद्यार्थी! अपने समय का एक-एक क्षण सत्कर्म में लगाओ। अपनी शक्ति के प्रत्येक अंश का सदुपयोग करो। जब तक साँस तब तक आस.... इस कहावत को मत भूलो और निरंतर प्रयत्न के सहारे आगे बढ़ते जाओ। जीवन में जो सुअवसर मिले उसका लाभ उठा लो।

बीता हुआ समय वापस नहीं आता। हे विद्यार्थी! सावधान हो जाओ। कहीं ऐसा न हो कि आलस्य के कारण जिंदगी की दौड़ में पीछे रह जाओ, पाये हुए अवसर को गँवा दो और अपनी समृद्धि के दरवाजों को अपने ही हाथों से बंद कर दो।

यदि तुमने आलस्य एवं टालमटोल के स्वभाव पर विजय पा ली तो निर्धनता तुम्हें आगे बढ़ने से रोक नहीं सकती। दृढ़ निश्चय करो कि जिस कार्य को हाथ में लूँगा उसे पूरा करके ही रहूँगा। आलस्य दूर करने के लिए आसन-प्राणायाम करूँगा। किसी भी समय अनावश्यक आराम नहीं करूँगा। ■

श्रीमती सुनीता सिंह
राजभाषा-प्रकोष्ठ

घमण्ड का नतीजा

बेंगाजी में उन दिनों राजा निम्मे का राज्य था। बेंगाजी एक छोटा सा राज्य था और चारों ओर घने जंगलों से घिरा हुआ था। जनता छोटे-छोटे कबीलों में वास करती थी। लोग खेती-बाड़ी करते और फल-फूल उगाते थे। राजा अपनी जनता को बहुत मानता था अतः प्रजा भी जी-जान से उसके गुणगान करती थी।

राजा निम्मे के सात बेटे थे। छोटे बेटे मुनमुन के अलावा शेष बेटे भी राजा की भाँति नेक थे। लेकिन मुनमुन अपने बाप के लाड़-प्यार के कारण थोड़ा बिगड़ गया था। वह किसी की बात नहीं सुनता था। हमेशा घमण्ड और गर्व से सबके साथ बात करता था। वह छोटे-बड़े का लिहाज भी नहीं करता था और हर किसी पर हुकुम चलाता था। किसी से कभी भूल से कोई गलती हो जाती तो वह बुरी तरह उस पर गुस्सा करता और उसे दण्ड देता । उसके उद्दण्ड स्वभाव के कारण महल के कर्मचारी तथा प्रजा दुखी थी। मगर कोई कुछ कहता नहीं था। सभी राजा तथा उसके भाइयों की सज्जनता के कारण उसे क्षमा कर देते थे ।

एक दिन की बात है, सातों भाई मछलियों का शिकार करने नदी पर गए। उन्होंने नदी में जाल फेंक दिया और सात मछलियाँ पकड़ लीं। मछलियाँ पकड़कर सातों भाई खुश हो गए और उन्होंने उन्हें सुखाने के लिए धूप में रख दिया।

थोड़ी देर के बाद छः राजकुमारों की मछलियाँ तो सूख गईं लेकिन छोटे राजकुमार मुनमुन की मछली नहीं सूखी। वह अवसर पाकर कूदने लगी और नदी की तरफ जाने लगी। मुनमुन ने उसकी यह हरकत देख ली। वह आग-बबूला हो गया। उसने झपटकर मछली को पकड़ लिया और क्रोध से बोला-'अरी बाकी मछलियाँ तो सूख गईं,तू सूखने से कैसे बच गई?"

मछली बेचारी सहम गई। उसने धीमे गले से उत्तर दिया-'इसमें मेरा कोई दोष नहीं, छोटे राजकुमार! पास ही घास का ढ़ेर पड़ा था, इसलिए मुझे धूप लगी ही नहीं। 'राजकुमार ने घास के ढेर को देखा। सचमुच

उसकी छाया में मछली सूखने से बच गई थी। राजकुमार को घास के ढेर पर बड़ा गुस्सा आया। वह दाँत भींचकर बोला-'तुझे यहाँ किसने फेंक रखा है? तेरे कारण मेरा भारी नुकसान हो गया है। घास ने उसकी उद्दण्डता सुन रखी थी। वह मिमियाकर बोली-'मैं क्या करूँ? आज मुझे गाय ने चरा नहीं। अगर गाय ने मुझे चर लिया होता तो सारे मैदान में धूप खिली होती।

'हूँ! तो उसका मतलब है कुसूरवार गाय है।' यह कहकर मुनमुन गाय के पास पहुँचा। गाय बेचारी खूँटे से बँधी थी। मुनमुन ने पहले तो जोर से छड़ी मारी फिर उसका कुसूर बताया।

गाय ने जवाब दिया-उसमें मेरा कोई कुसूर नहीं। चरवाहे ने मुझे खूँटे से खोला ही नहीं। फिर भला मैं घास चरने कैसे जाती? '

राजकुमार तुरन्त चरवाहे के पास पहुँचा। अब तक उसका गुस्सा सातवें आसमान पर चढ़ गया था।

चरवाहा अपनी झोपड़ी में उँगली पकड़कर दर्द से तड़प रहा था। मुनमुन ने ऐंठकर पूछा-'यहाँ बैठा-बैठा क्या कर रहा है? ' गाय को चराने क्यों नहीं गया?'

चरवाहा दर्द से कातर होकर बोला-'छोटे राजकुमार, मेरी उँगली में चींटे ने डंक मार दिया है, इसलिए मैं आज घर से निकल नहीं सका।

ओहो, तो इसका मतलब है सारी कारस्तानी की जड़ यही चींटा है। मैं अभी जाकर उसकी खबर लेता हूँ। मुनमुन बड़बड़ाता हुआ चरवाहे की झोंपड़ी से निकल आया। बाहर एक झाड़ी के पास चींटा मिल गया। मुनमुन ने तेज आवाज में कहा 'बेवकूफ, तूने चरवाहे को डंक क्यों मारा?

बाल-बत्तीसी

'तेरे कारण मेरी मछली नहीं सूखी। मैं तेरी जान निकाल दूँगा।'

मुनमुन कड़वी जबान का था तो चींटा भी कम नहीं था। उसकी जबान पर तो हमेशा जहर सवार रहता है। उसने तैश में आकर कहा-मुझसे इस तरह से बात करने की जरूरत नहीं। मैं तुमसे ज्यादा उद्दण्ड हूँ। मुझे हाथ लगाओगे तो अभी डंक मार दूँगा। भाग जा यहाँ से।'

लेकिन मुनमुन घमण्ड में चूर था। उसने अपना पैर बढ़ाकर उसे जैसे ही मसलना चाहा कि चींटे ने पैर में डंक मार दिया। मुनमुन दर्द से चीखकर पीछे हट गया।

मुनमुन रोते-रोते नदी किनारे आ गया। घास की छाया में अभी तक मछली पड़ी हुई थी। उसने राजकुमार को रोते देखा तो पूछा-'क्या हुआ, छोटे राजकुमार?'

मुनमुन ने सारी कथा सुना दी।

मछली बोली-'छोटे राजकुमार, जिस प्रकार चींटे के काटने से तुम्हें दर्द हुआ है, इसी प्रकार तुम्हारी जहर-भरी बातें सुनकर दूसरे लोगों को भी कष्ट होता है। अब तो तुम जान गए कि दर्द कैसा होता है इसलिए दूसरों का दर्द भी मत बढ़ाओं।'

मुनमुन को मछली का बात जँच गई। उसने मछली को नदी में डाल दिया और महल लौट आया।

उस दिन से वह सबसे अच्छी तरह व्यवहार करने लगा। ■■

विश्व की लोक कथाएं-संग्रह से उद्धृत

उच्च शिक्षा

हम देश की भाषा में जब शिक्षा देने पर जोर देते हैं तब वस्तुतः हम शिक्षा के स्तर को ऊँचा करने की बात करते हैं। यह बात सभी अध्यापकों और शिक्षा-व्यवस्था पर लागू होती है। शिक्षा के स्तर को ऊँचा करने का अर्थ है, अध्यापकों द्वारा और भी परिश्रम से अध्याप्य विषय के सम्प्रेषण की तैयारी। यह बात खेद के साथ स्वीकार की जानी चाहिए कि देशी भाषाओं में शिक्षा देना एक कामचलाऊ विधान मात्र मान लिया गया है। इस विषय में दुविधा, कुण्ठा और हिचक का मनोभाव पाया जाता है। जब तक प्रत्येक विद्यालय को-कुछ चुने हुए विद्यालय को ही नहीं-आदर्श विद्यालय बना देने की धुन नहीं जगती तब तक यह समस्या सुलझने के बजाय उलझती ही जाएगी। ■■

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी

हमारी कोशिश

हमारे परिसर में.. हमारी मातृभाषा हिंदी के विकास तथा प्रचार-प्रसार के लिए सालों से चली आ रही हिंदी साहित्य सभा की कोशिशों को हम सलाम करते हैं तथा इसकी गरिमा को बनाये रखने में उतने ही जोर-शोर से हम आज भी प्रयासरत हैं। हमारी कोशिश मात्र परिसर की जनता में हिंदी के प्रति आदर भाव जगाने तक ही सीमित नहीं है, अपितु सच्चे दिल से उन लोगों की सहायता करना भी है, जिन्हें हिंदी समझने में या पूर्णतः हिंदी वातावरण में रहने के कारण अंग्रेजी समझने में परेशानियां होती हैं।

हम अहिन्दी भाषी जनता के लिए निःशुल्क हिन्दी कक्षाओं का आयोजन करते हैं। साथ ही साथ परामर्शदात्री-सेवा (काउंसलिंग सर्विस) के साथ मिलकर हम उन नए विद्यार्थियों के लिए अंग्रेजी में भी ऐसी ही निःशुल्क कक्षाएं आयोजित करते हैं जिन्हें बचपन से ही हिन्दी वातावरण की आदत होने के कारण यहाँ के अध्ययन को समझने में कठिनाइयाँ आती हैं। इन कक्षाओं को हमारी परामर्शदात्री-सेवा ने बहुत सम्मान भी प्रदान किया है। इसके अतिरिक्त हिंदी साहित्य सभा अन्य जगहों से आये लोगों के लिए कविता-लेखन, आशु-भाषण, वाद-विवाद, सप्तरंग तथा मंथन जैसी कई मनोरंजक प्रतियोगिताएं भी आयोजित करती है। इनकी झलक अंतराग्नि तथा हिन्दी दिवस जैसे आयोजनों में दिखती है।

हमारे सभा की तरफ से कैम्पस के एफ.एम. रेडियो पर हमारे 3 कार्यक्रमों का भी प्रसारण होता है। जिनमें प्रेमचंद, दिनकर जैसे सुप्रसिद्ध लेखकों/कवियों की प्रसिद्ध रचनायें 'बिखरे मोती' के द्वारा तथा अपनी स्वरचित रचनाओं को मन की आवाज के द्वारा अभिव्यक्त करने का अवसर प्रदान किया जाता है, साथ ही 'आमने-सामने' कार्यक्रम में हम अपने कैम्पस की जानी-मानी हस्तियों के जीवन की एक झलक लोगों तक पहुँचाने का प्रयास करते हैं। इन कार्यक्रमों का न सिर्फ कैम्पस के लोग अपितु आस-पास के क्षेत्रों में रहने वाले लोग भी आनंद उठाते हैं।

इसी वर्ष 'अन्तस्' (संस्थान की हिंदी साहित्य पत्रिका) पहली बार लोगों के सामने आई, राजभाषा प्रकोष्ठ के साथ मिलकर इसकी नयी कड़ी आपके सामने लाने में योगदान देकर हमें बहुत प्रसन्नता हुई है। हमें आशा है कि हमारी कोशिशे आपके दिलों को छूने में सफल रहेगी। ■■

समन्वयक
हिन्दी साहित्य सभा..

छायाचित्र - 44वां दीक्षान्त-समारोह

छायाचित्र - 44वां दीक्षान्त-समारोह

कार्यालयीन उपयोगी टिप्पणियाँ

कृपया शीघ्र उत्तर दें	Kindly expedite reply
स्वीकृति की प्रतीक्षा है -	*Acceptance is awaited*
कारण बताने के लिए आदेश देना	Call upon to show cause
जवाब तलब किया जाए -	*Call for an explanation*
विस्तृत विवरण भेजा जाए	Detailed particulars may be furnished
समेकित रिपोर्ट प्रस्तुत की जाए -	*Consolidated report may be furnished*
यथा संशोधित मसौदा जारी किया जाए	Draft as amended may be issued
विसंगति का समाधान कर लिया जाए -	*Discrepancy may be reconciled*
प्राक्कलन तैयार किया जा रहा है	Estimate is under preparation
मामले का संक्षिप्त सारांश नीचे रखा है -	*A brief summary of the case is placed below*
सहमति के लिए	For concurrence
एकपक्षीय निर्णय -	*Ex-parte judgement*
सादर निवेदन है	I have the honour to say
अनुकूल कार्रवाई के लिए -	*For favourable action*
यह गौण प्रश्न है	It is a side issue
अग्रेषित और संस्तुत -	*Forwarded and recommended*
उचित माध्यम से	Through proper channel
मुझे निदेश हुआ है कि मैं आपको सूचित करूँ -	*I have been directed to inform you*
सदभाव के लिए कार्य करते हुए	Acting in good faith
एक मुश्त/ एक बार में -	*In one lump sum*

रसानुभूति
(श्रृंगार रस - संयोग भाव)

रितु पावस बरसै, पिउ पावा। सावन भादौं अधिक सोहावा।।
पदमावति चाहत ऋतु पाई। गगन सोहावन, भूमि सोहाई।।
कोकिल बैन, पाँति बग छूटी। धनि निसरीं जनु बीरबहूटी।।
चमक बीजु, बरसै जल सोना। दादुर मोर सबद सुठि लोना।।
रंग-राती पीतम संग जागी। गरजे गगन चौंकि गर लागी।।
सीतल बूँद, ऊँच चौपारा। हरियर सब देखाइ संसारा।।
हरियर भूमि, कुसुंभी चोला। औ धनि पिउ सँग रचा हिंडोला।।

पवन झकोरे होइ हरष, लागे सीतल बास।
धनि जानै यह पवन है, पवन सो अपने आस।।

पदमावत, मलिक मुहम्मद जायसी

सोलर प्रेस, कानपुर ☎ 2534799

संपर्कः
राजभाषा-प्रकोष्ठ
भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान कानपुर-208016 (उ.प्र.)
दूरभाष-0512-2597122/2597249
ई-मेल-vedps@iitk.ac.in

अभिकल्प-सुनीता सिंह